मनोविज्ञान एवं जीवन

8

इस अध्याय को पढ़ने के बाद आप

- हमारे जीवन की सामान्य समस्याओं के समाधान में मनोविज्ञान का उपयोग कैसे किया जा सकता है, यह समझ सकेंगे,
- मानव तथा पर्यावरण के बीच के संबंध को समझ सकेंगे,
- पर्यावरणी दबावकारकों का सामना करने में पर्यावरण-उन्मुख व्यवहार किस प्रकार सहायता करते हैं, इसका विश्लेषण कर सकेंगे,
- सामाजिक समस्याओं के कारणों तथा परिणामों की व्याख्या मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से कर सकेंगे तथा
- निर्धनता, आक्रामकता तथा स्वास्थ्य जैसी समस्याओं के संभावित उपचारों के बारे में जान सकेंगे।

विषयवस्तु

परिचय

मानव-पर्यावरण संबंध

मानव-पर्यावरण संबंध के विभिन्न दृष्टिकोण

विश्नोई समुदाय तथा चिपको आंदोलन (बॉक्स 8.1)

मानव व्यवहार पर पर्यावरणी प्रभाव

पर्यावरण पर मानव प्रभाव

शोर

प्रदूषण

भीड़

प्राकृतिक विपदाएँ

पर्यावरण-उन्मुख व्यवहार को प्रोत्साहन

मनोविज्ञान तथा सामाजिक सरोकार

निर्धनता तथा भेदभाव

आक्रमण, हिंसा तथा शांति

महात्मा गांधी तथा अहिंसा-अहिंसा क्यों कारगर होती है? (बॉक्स 8.2)

स्वास्थ्य

व्यवहार पर टेलीविज़न का समाघात

प्रमुख पद

सारांश

समीक्षात्मक प्रश्न

परियोजना विचार

वेबलिंक्स

शैक्षिक संकेत

परिचय

पिछले दो अध्यायों में आपने सामाजिक व्यवहारों तथा समूहों से संबंधित कुछ विषयों का अध्ययन किया। अब हम कुछ ऐसे व्यापक सामाजिक सरोकारों पर विमर्श करेंगे, जो परस्पर संबद्ध हैं तथा जिनमें मनोवैज्ञानिक पक्ष अंतर्निहित होते हैं। इन मुद्दों (समस्याओं) को व्यक्तिगत के बजाय सामुदायिक स्तर पर समझना तथा उनका समाधान करना होगा। अब यह ज्ञात है कि पर्यावरण हमारे शारीरिक स्वास्थ्य को प्रभावित करने के अतिरिक्त हमारी मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं तथा व्यवहारों को भी प्रभावित करता है। मानव भी अपने व्यवहारों के द्वारा पर्यावरण को प्रभावित करते हैं तथा इनमें से कुछ प्रभाव दबाव उत्पन्न करने वाली पर्यावरणी दशाओं, जैसे – शोर, प्रदूषण तथा भीड़ में परिलक्षित होते हैं। फिर भी कुछ पर्यावरणी दबावकारक, जैसे- प्राकृतिक विपदाएँ मानव नियंत्रण में नहीं होते हैं। क्षति पहुँचाने वाले विभिन्न पर्यावरणी प्रभावों को पर्यावरण-समर्थक व्यवहारों तथा पूर्व में की गई तैयारी के द्वारा कम किया जा सकता है। आप कुछ सामाजिक समस्याओं, जैसे – आक्रमण और हिंसा, स्वास्थ्य तथा निर्धनता और भेदभाव के कारणों और परिणामों के बारे में पढ़ेंगे। आप एक झलक इसकी भी पाएँगे कि निर्धनता तथा वंचन किस प्रकार व्यक्तियों को भेदभाव तथा सामाजिक अपवर्जन (social exclusion)से उत्पीड़ित कर देते हैं। मानव सामर्थ्य, सामाजिक सामंजस्य और मानसिक स्वास्थ्य के विकास में निर्धनता और वंचन का पर्यावरण दूरगामी उलझनें (जटिलताएँ) पैदा करता है। निर्धनता को कम करने के कुछ उपाय भी वर्णित किए गए हैं। इसके अतिरिक्त स्वास्थ्य के मनोवैज्ञानिक पक्ष तथा हिंसा एवं दूसरे प्रकार के व्यवहारों पर टेलीविज़न देखने के समाघात की भी व्याख्या की गई है। यह अध्याय आपको यह समझने में मदद करेगा कि मनोवैज्ञानिक ज्ञान का व्यावहारिक अनुप्रयोग ऐसे पहलुओं, जैसे- पर्यावरण-उन्मुख व्यवहारों को बढ़ावा देना, हिंसा तथा भेदभाव को कम करना तथा सकारात्मक स्वास्थ्य संबंधी अभिवृत्तियों के उन्नयन में कैसे किया जा सकता है।

मानव-पर्यावरण संबंध

कुछ क्षण निकाल कर इन प्रश्नों के उत्तर देने का प्रयास कीजिए — क्या एक वृक्ष आप का 'सबसे अच्छा मित्र' हो सकता है? क्या अधिक गर्म मौसम में या अधिक भीड़ में लोग अधिक आक्रामक हो जाते हैं? यदि नदियों को पवित्र कहा जाता है तो व्यक्ति उन्हें गंदा क्यों करते हैं? किसी प्राकृतिक विपदा, जैसे- भूकंप या सुनामी अथवा किसी मानव-निर्मित विपदा, जैसे- किसी कारखाना में विषैली गैस का रिसाव इत्यादि के अभिघातज प्रभाव का उपचार कैसे किया जा सकता है? दो ऐसे बच्चों की तुलना कीजिए जो भिन्न भौतिक पर्यावरणों में पलकर बड़े हुए हैं– एक वह जिसके पर्यावरण में रंगीन खिलौने, चित्र एवं पुस्तकें भरी हुई थीं और दूसरा वह जिसके पर्यावरण में केवल जीवन की मूल आवश्यकताओं की पूर्ति के ही समान थे। क्या दोनों बच्चे एक समान संज्ञानात्मक कौशलों को विकसित करेंगे? लोग इन प्रश्नों के विभिन्न उत्तर दे सकते हैं।

इन प्रश्नों के द्वारा जो एक सामान्य विचार प्रकट होता है, वह यह है कि मानव व्यवहार तथा पर्यावरण के बीच का संबंध हमारे जीवन में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। आजकल यह जागरूकता बढ़ रही है कि ऐसी पर्यावरणी समस्याएँ, जैसे- शोर, वायु, जल तथा भू-प्रदूषण और कूड़े को निपटाने के असंतोषजनक उपायों का शारीरिक स्वास्थ्य पर क्षतिकर प्रभाव पड़ता है। किंतु यह तथ्य कम ज्ञात है कि उपरोक्त प्रकारों का प्रदूषण एवं अन्य अदृश्य पर्यावरणी कारक मनोवैज्ञानिक स्वास्थ्य तथा प्रकार्यों को भी प्रभावित करते हैं। मनोविज्ञान की एक शाखा जिसे **पर्यावरणी मनोविज्ञान** (environmental psychology) कहते हैं, अनेक ऐसे मनोवैज्ञानिक मुद्दों का अध्ययन करता है जिनका संबंध व्यापक अर्थ में मानव-पर्यावरण अंत:क्रियाओं से होता है।

पर्यावरण (□□□□□□□□□□□□) शब्द, हमारे चारों ओर जो कुछ है उसे संदर्भित करता है, शाब्दिक रूप से हमारे चारों ओर भौतिक, सामाजिक, कार्य तथा सांस्कृतिक पर्यावरण में जो सब कुछ है वह इसमें निहित है। व्यापक रूप से, व्यक्ति के बाहर जो शक्तियाँ हैं, जिनके प्रति व्यक्ति अनुक्रिया करता है, वे सब इसमें निहित हैं। इस भाग में भौतिक पर्यावरण ही विवेचन का केंद्रबिंदु होगा। **पारिस्थितिकी** (□□□□□□□□) जीव तथा उसके पर्यावरण के बीच के संबंधों का अध्ययन है। मनोविज्ञान में पर्यावरण तथा मनुष्यों की परस्पर-निर्भरता पर फोकस है क्योंकि पर्यावरण का अर्थ उन मनुष्यों के आधार पर ही निकलता है जो उसमें रहते हैं। इस संदर्भ में **प्राकृतिक पर्यावरण** (natural environment) तथा **निर्मित पर्यावरण** (built environment) में भेद किया जा सकता है। जैसाकि नाम से ही स्पष्ट है, प्रकृति का वह अंश जिसे मानव ने नहीं छुआ है, वह प्राकृतिक पर्यावरण कहलाता है। जबकि दूसरी ओर, प्राकृतिक पर्यावरण में जो कुछ भी मानव द्वारा सर्जित है, वह निर्मित पर्यावरण है। नगर, मकान, दफ्तर, कारखाना, पुल, शॉपिंग मॉल, रेल पटरी, सड़कें, बाँध, यहाँ तक कि कृत्रिम रूप से बनाए गए पार्क और झीलें भी निर्मित पर्यावरण के कुछ उदाहरण हैं जो यह प्रदर्शित करते हैं कि प्रकृति की देन को मनुष्यों ने किस प्रकार परिवर्तित कर दिया है।

निर्मित पर्यावरण के अंतर्गत साधारणतया **पर्यावरणी अभिकल्प** (environmental design) का संप्रत्यय भी आता है। 'अभिकल्प' में कुछ मनोवैज्ञानिक लक्षण होते हैं, जैसे–

- मानव मस्तिष्क की सर्जनात्मकता, जैसाकि वास्तुविदों, नगर योजनाकारों और सिविल अभियंताओं के कार्यों में अभिव्यक्त होता है।
- प्राकृतिक पर्यावरण पर मानव नियंत्रण के अर्थ में, जैसाकि नदी के प्राकृतिक बहाव को बाँध बना कर नियमित करने से प्रदर्शित होता है।
- निर्मित पर्यावरण में सामाजिक अंत:क्रिया के प्रकार पर प्रभाव। यह विशिष्टता, उदाहरण के लिए, कॉलोनी में घरों के बीच की दूरी में, एक घर में कक्षों की अवस्थिति में या किसी दफ्तर में औपचारिक तथा अनौपचारिक सभा के लिए कार्य करने की मेज़ों और कुर्सियों की व्यवस्था में प्रतिबिंबित होती है।

मानव-पर्यावरण संबंध के विभिन्न दृष्टिकोण

मानव-पर्यावरण संबंध पर अनेक दृष्टिकोण हैं जो मुख्यत: इस पर निर्भर हैं कि मनुष्य इस संबंध का प्रत्यक्षण किस प्रकार करते हैं। स्टोकोल्स (Stokols) (1990) नामक एक मनोवैज्ञानिक ने तीन उपागमों का वर्णन किया है जो कि मानव-पर्यावरण संबंध का विवरण प्रस्तुत करते हैं।

(अ) **अल्पतमवादी परिप्रेक्ष्य** (minimalist perspective) का यह अभिग्रह है कि भौतिक पर्यावरण मानव व्यवहार, स्वास्थ्य तथा कुशल-क्षेम (कल्याण) पर न्यूनतम या नगण्य प्रभाव डालता है। भौतिक पर्यावरण तथा मनुष्य का अस्तित्व समांतर घटक के रूप में होता है।

(ब) **नैमित्तिक परिप्रेक्ष्य** (instrumental perspective) प्रस्तावित करता है कि भौतिक पर्यावरण का अस्तित्व ही प्रमुखतया मनुष्य के सुख एवं कल्याण के लिए है। पर्यावरण के ऊपर मनुष्य के अधिकांश प्रभाव इसी नैमित्तिक परिप्रेक्ष्य को प्रतिबिंबित करते हैं।

(स) **आध्यात्मिक परिप्रेक्ष्य** (spiritual perspective) पर्यावरण को एक सम्मानयोग्य और मूल्यवान वस्तु के रूप में संदर्भित करता है न कि एक समुपयोग करने योग्य वस्तु के रूप में। इसमें निहित मान्यता है कि मनुष्य अपने तथा पर्यावरण के मध्य परस्पर-निर्भर संबंध को पहचानते हैं, अर्थात मनुष्य का भी तभी अस्तित्व रहेगा और वे प्रसन्न रहेंगे जब पर्यावरण को स्वस्थ तथा प्राकृतिक रखा जाएगा।

पर्यावरण के विषय में पारंपरिक भारतीय दृष्टिकोण आध्यात्मिक परिप्रेक्ष्य को मान्यता देता है। हमारे देश में इस परिप्रेक्ष्य के कम से कम दो उदाहरण हैं जो कि राजस्थान के विश्नोई समुदाय के रीति-रिवाज तथा उत्तराखंड क्षेत्र के चिपको आंदोलन (बॉक्स 8.1 देखें) हैं। इसके विपरीत हमें ऐसे उदाहरण भी मिलते हैं जबकि लोगों ने पर्यावरण को क्षतिग्रस्त किया है जो कि नैमितिक परिप्रेक्ष्य का निषेधात्मक दृष्टांत या उदाहरण है।

बॉक्स 8.1

विश्नोई समुदाय तथा चिपको आंदोलन

राजस्थान का एक छोटा समुदाय विश्नोई अपने वृक्षों तथा वन्य जीवों को उतना ही मूल्यवान समझते हैं जितना अपना जीवन। अपने गुरु के 29 नियमो में से एक का पालन करते हुए वे मनुष्य द्वारा वृक्षों के विनाश को रोकने के लिए कुछ भी कर सकते हैं, इसमें वृक्षों को खतरे की किसी भी स्थिति में लिपट जाना भी निहित है; अत: वृक्ष नष्ट करने वाला बिना मानव शरीर को हताहत किए वृक्ष नहीं काट सकता। इसी के समान हिमालय की घाटी के उत्तराखंड क्षेत्र में वृक्षों का संरक्षण चिपको आंदोलन ('चिपको' का अर्थ ही है पेड़ों से सट कर उनको गले से लगा लेना) के द्वारा हुआ है। इस आंदोलन का उद्देश्य वनों का संरक्षण, भू-स्खलन(landslide) तथा भू-क्षरण (soil erosion)को इस क्षेत्र में रोकना तथा यहाँ के निवासियों की जीविका को संबल प्रदान करना है। 1960 के दशक में जब शासन का वन विभाग वृक्षों की अंधाधुंध बड़े पैमाने पर कटान को रोकने में बिल्कुल असफल रहा, तब उत्तराखंड के आर्थिक रूप से पिछड़े क्षेत्र के लोगों ने अपनी उद्विग्नता को चिपको आंदोलन के द्वारा प्रकट किया, जो कि 1970 के बाढ़ की तबाही के बाद से और भी प्रबल हो गया।

चिपको आंदोलन की माँगों के ज्ञापन में छह नियम निहित हैं– (अ) कुछ विशेष वृक्ष तथा वनस्पति जो एक विशिष्ट भौगोलिक क्षेत्र के लिए उपयुक्त हैं, केवल उन्हीं को उगाना चाहिए, (ब) भू-स्खलन तथा भू-क्षरण क्षेत्र में वनों को चिह्नित तथा उनका नवीकरण करने की ज़रूरत है, (स) वे लोग जो प्रथागत रूप से वनों के निकट रहते हैं तथा वनों पर ही जिनकी उत्तरजीविता निर्भर है, उन्हें यह अधिकार होना चाहिए कि वे वैसा ही जीवन यापन करते रहें, (द) व्यावसायिक लकड़ी के समुपयोग हेतु संविदा या ठेका पद्धति का अंत किया जाना चाहिए, (ध) ग्रामीणों के उपयोग के वृक्ष गाँव के निकट ही लगाए जाने चाहिए, तथा (श) छोटे वन उत्पादों पर आधारित ग्राम कुटीर उद्योग लगाए जाने चाहिए जिससे स्थानीय व्यक्तियों को रोज़गार प्राप्त हो सके तथा गाँवों से प्रवसन रोका जा सके। भारत तथा विदेशों में इस आंदोलन को पर्यावरणवादियों ने तथा शासन ने भी स्वीकार किया है।

मानव व्यवहार पर पर्यावरणी प्रभाव

मानव-पर्यावरण संबंध का गुणविवेचन करने के लिए यह समझना आवश्यक है कि ये दोनों एक-दूसरे को प्रभावित करते हैं तथा वे एक-दूसरे पर अपने अस्तित्व तथा रख-रखाव के लिए निर्भर हैं। जब हम अपना ध्यान प्राकृतिक पर्यावरण के प्रभाव को मानव पर केंद्रित करते हैं तो हमें अनेक पर्यावरणी प्रभाव मिलते हैं जिनका विस्तार भौतिक प्रभाव, जैसे-जलवायु के अनुकूल वस्त्रों को बदलना से लेकर तीव्र मनोवैज्ञानिक प्रभाव, जैसे-प्राकृतिक विपदा के पश्चात गंभीर अवसाद का होना तक है। कुछ प्रभाव जिन्हें मनोवैज्ञानिकों ने इंगित किया है, वे नीचे वर्णित हैं।

- **प्रत्यक्षण पर पर्यावरणी प्रभाव** – पर्यावरण के कुछ पक्ष मानव प्रत्यक्षण को प्रभावित करते हैं। उदाहरण के लिए, जैसाकि आपने कक्षा 11 में पढ़ा है, अफ़्रीका की एक जनजाति समाज गोल कुटियों (झोपड़ियों) में रहती है अर्थात ऐसे घरों में जिनमें कोणीय दीवारें नहीं हैं। वे ज्यामितिक भ्रम (मूलर-लायर भ्रम) में कम त्रुटि प्रदर्शित करते हैं, उन व्यक्तियों की अपेक्षा जो नगरों में रहते हैं और जिनके मकानों में कोणीय दीवारें होती हैं।
- **संवेगों पर पर्यावरणी प्रभाव** – पर्यावरण का प्रभाव हमारी सांवेगिक प्रतिक्रियाओं पर भी पड़ता है। प्रकृति के प्रत्येक रूप का दर्शन चाहे वह शांत नदी का प्रवाह हो, एक मुस्कुराता हुआ फूल हो, या एक शांत पर्वत की चोटी हो, मन को एक ऐसी प्रसन्नता से भर देता है जिसकी तुलना किसी अन्य अनुभव से नहीं की जा सकती। प्राकृतिक विपदाएँ, जैसे-बाढ़, सूखा, भू-स्खलन, भूकंप चाहे पृथ्वी के ऊपर हो या समुद्र के नीचे हो, वह व्यक्ति के संवेगों पर इस सीमा तक प्रभाव डाल सकते हैं कि वे गहन अवसाद और दुख, तथा पूर्ण असहायता की भावना और अपने जीवन पर नियंत्रण के अभाव का अनुभव करते हैं। मानव संवेगों पर ऐसा प्रभाव एक अभिघातज अनुभव है जो व्यक्तियों के जीवन को सदा के लिए परिवर्तित कर देता है तथा घटना के बीत जाने के बहुत समय बाद तक भी **अभिघातज उत्तर दबाव विकार** (post-traumatic stress disorder, PTSD) के रूप मे बना रहता है।
- **व्यवसाय, जीवन शैली तथा अभिवृत्तियों पर पारिस्थितिक प्रभाव** – किसी क्षेत्र का प्राकृतिक पर्यावरण यह निर्धारित करता है कि उस क्षेत्र के निवासी कृषि

पर (जैसे- मैदानों में) या अन्य व्यवसायों, जैसे- शिकार तथा संग्रहण पर (जैसे- वनों, पहाड़ों या रेगिस्तानी क्षेत्रों में) या उद्योगों पर (जैसे- उन क्षेत्रों में जो कृषि के लिए उपजाऊ नहीं हैं) निर्भर रहते हैं। परंतु किसी विशेष भौगोलिक क्षेत्र के निवासियों के व्यवसाय भी उनकी जीवन शैली और अभिवृत्तियों का निर्धारण करते हैं। किसी रेगिस्तान के निवासी के दैनिक कार्य की तुलना, किसी पहाड़ी क्षेत्र के निवासी के दैनिक कार्य के साथ कीजिए तथा मैदानों में रहने वालों के साथ भी कीजिए। यह देखा गया है कि एक कृषक समाज को अपने सदस्यों के सामूहिक प्रयासों पर निर्भर होना पड़ता है। इसके फलस्वरूप कृषक समाज के सदस्यों में सहयोगशीलता की अभिवृत्ति विकसित हो जाती है तथा वे समूह के हितों को व्यक्ति की इच्छाओं से अधिक महत्वपूर्ण समझते हैं। वे अधिकतर प्रकृति के निकट होते हैं और प्राकृतिक घटनाओं, जैसे - मानसून पर अधिक निर्भर होते हुए ऐसी स्थितियों का सामना करते हैं जहाँ प्राकृतिक संसाधन, जैसे - पानी सीमित मात्रा में उपलब्ध होता है। इसलिए कृषक समाज के सदस्य अपने विश्वासों के प्रति अधिक भाग्यवादी हो जाते हैं। इसके विपरीत, औद्योगिक समाज के सदस्य मुक्त चिंतन को अधिक मूल्यवान समझ सकते हैं, प्रतियोगित्व की अभिवृत्ति विकसित कर सकते हैं तथा अपने साथ घटित होने वाली घटनाओं के संबंध में व्यक्तिगत नियंत्रण का विश्वास विकसित कर लेते हैं।

पर्यावरण पर मानव प्रभाव

मनुष्य भी अपनी शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए और अन्य उद्देश्यों से भी प्राकृतिक पर्यावरण के ऊपर अपना प्रभाव डालते हैं। निर्मित पर्यावरण के सारे उदाहरण पर्यावरण के ऊपर मानव प्रभाव को अभिव्यक्त करते हैं। उदाहरण के लिए, मानव ने जिसे हम 'घर' कहते हैं, उसका निर्माण प्राकृतिक पर्यावरण को परिवर्तित करके ही किया जिससे कि उन्हें एक आश्रय मिल सके। मनुष्यों के इस प्रकार के कुछ कार्य पर्यावरण को क्षति भी पहुँचा सकते हैं और अन्ततः स्वयं उन्हें भी अनेकानेक प्रकार से क्षति पहुँचा सकते हैं। उदाहरण के लिए, मनुष्य उपकरणों का उपयोग करते हैं, जैसे- रेफ्रिजरेटर तथा वातानुकूलन यंत्र जो रासायनिक द्रव्य (जैसे- सी.एफ.सी. या क्लोरो-फ्लोरो-कार्बन) उत्पादित करते हैं, जो वायु को प्रदूषित करते हैं तथा अंततः ऐसे शारीरिक रोगों के लिए उत्तरदायी हो सकते हैं, जैसे- कैंसर के कुछ प्रकार। धूम्रपान के द्वारा हमारे आस-पास की वायु प्रदूषित होती है तथा प्लास्टिक एवं धातु से बनी वस्तुओं को जलाने से पर्यावरण पर घोर विपदाकारी प्रदूषण फैलाने वाला प्रभाव होता है। वृक्षों के कटान या निर्वनीकरण के द्वारा कार्बन चक्र एवं जल चक्र में व्यवधान उत्पन्न हो सकता है। इससे अंततः उस क्षेत्र विशेष में वर्षा के संरूप पर प्रभाव पड़ सकता है और भू-क्षरण तथा मरुस्थलीकरण में वृद्धि हो सकती है। वे उद्योग जो निस्सारी का बहिर्वाह करते हैं तथा इस असंसाधित गंदे पानी को नदियों में प्रवाहित करते हैं, इस प्रदूषण के भयावह भौतिक (शारीरिक) तथा मनोवैज्ञानिक परिणामों से तनिक भी चिंतित प्रतीत नहीं होते हैं।

इन अनेक उदाहरणों में क्या मनोवैज्ञानिक संदेश हैं? संदेश यह हैं कि यद्यपि उपर्युक्त अधिकांश प्रभाव भौतिक हैं किंतु मनुष्य ने उन्हें प्राकृतिक पर्यावरण के ऊपर अपने नियंत्रण तथा शक्ति को दर्शाने के लिए ही जनित किया है। इस बात में विरोधाभास है कि मानव अपने जीवन की गुणवत्ता को उन्नत बनाने के लिए ही टेक्नोलॉजी का उपयोग कर प्राकृतिक पर्यावरण को परिवर्तित कर रहा है जबकि वास्तविकता यह है कि वे संभवतः जीवन की गुणवत्ता को और खराब बना रहे हैं।

शोर (noise), **प्रदूषण** (pollution), **भीड़** (crowding) तथा **प्राकृतिक विपदाएँ** (natural disasters) ये सब **पर्यावरणी दबावकारकों** (environmental stressors) के उदाहरण हैं। ये वे पर्यावरणी उद्दीपक या दशाएँ हैं जो मनुष्यों के प्रति दबाव उत्पन्न करते हैं। जैसा कि आप अध्याय 3 में पढ़ चुके हैं कि दबाव एक अप्रिय मनोवैज्ञानिक स्थिति है जो व्यक्ति में तनाव तथा दुश्चिंता उत्पन्न करती है। अपितु, इन विभिन्न दबावकारकों के प्रति मानव प्रतिक्रियाएँ भिन्न हो सकती हैं। कुछ क्षतिकारक पर्यावरणी प्रभाव नीचे वर्णित हैं–

शोर

कोई भी ध्वनि जो खीझ या चिड़चिड़ाहट उत्पन्न करे और अप्रिय हो, उसे शोर कहते हैं। सामान्य अनुभव के आधार पर यह ज्ञात है कि विशेष रूप से दीर्घकालीन शोर कष्टप्रद होता है तथा व्यक्ति में अप्रीतिकर भावदशा उत्पन्न करता है। दीर्घकाल तक शोर के समक्ष उद्भासन से सुनने की

क्षमता में कमी आ सकती है। इसके अतिरिक्त शोर के समक्ष उद्भासन से मानसिक क्रियाओं पर निषेधात्मक प्रभाव पड़ता है क्योंकि इससे एकाग्रता कम हो जाती है। आप में से अनेकों ने यह अनुभव उस समय किया होगा जब आप परीक्षा के लिए पढ़ने का प्रयास कर रहे थे और पड़ोसी विवाह के अवसर पर ज़ोर से संगीत बजा रहे थे।

कार्य निष्पादन पर शोर के प्रभाव को उसकी तीन विशेषताएँ निर्धारित करती हैं, जिन्हें शोर की **तीव्रता** (intensity), **भविष्यकथनीयता** (predictability) तथा **नियंत्रणीयता** (controllability) कहते हैं। मनुष्य पर शोर के प्रभावों पर किए गए क्रमबद्ध शोध प्रदर्शित करते हैं कि –

- शोर चाहे तीव्र हो या धीमा हो, वह समग्र निष्पादन को तब तक प्रभावित नहीं करता है जब तक कि संपादित किए जाने वाला कार्य सरल हो, जैसे- संख्याओं का योग। ऐसी स्थितियों में व्यक्ति अनुकूलन कर लेता है या शोर का 'आदी' हो जाता है।
- जिस कार्य का निष्पादन किया जा रहा है यदि वह अत्यंत रुचिकर होता है, तब भी शोर की उपस्थिति में निष्पादन प्रभावित नहीं होता है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि कार्य की प्रकृति व्यक्ति को पूरा ध्यान उसी में लगाने तथा शोर को अनसुना करने में सहायता करती है। यह भी एक प्रकार का अनुकूलन हो सकता है।
- जब शोर कुछ अंतराल के बाद आता है तथा उसके संबंध में भविष्यकथन नहीं किया जा सकता, तब वह निरंतर होने वाले शोर की अपेक्षा अधिक बाधाकारी प्रतीत होता है।
- जिस कार्य का निष्पादन किया जा रहा है, जब वह कठिन होता है या उस पर पूर्ण एकाग्रता की आवश्यकता होती है, तब तीव्र, भविष्यकथन न करने योग्य तथा नियंत्रित न किया जा सकने वाला शोर निष्पादन स्तर को घटाता है।
- जब शोर को सहन करना या बंद कर देना व्यक्ति के नियंत्रण में होता है तब कार्य निष्पादन में त्रुटियों में कमी आती है।
- संवेगात्मक प्रभावों के संदर्भ में, शोर यदि एक विशेष स्तर से अधिक हो तो उसके कारण चिड़चिड़ापन आता है तथा इससे नींद में गड़बड़ी भी उत्पन्न हो सकती है। यदि शोर पर नियंत्रण किया जा सकता हो या फिर वह व्यक्ति के व्यवसाय के लिए आवश्यक हो तो इन प्रभावों में कमी आती है। अपितु, अनियंत्रणीय तथा खिझाने वाले शोर के समक्ष निरंतर उद्भासन के कारण मानसिक स्वास्थ्य को भी क्षति पहुँच सकती है।

उपर्युक्त प्रेक्षणों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि शोर के दबावपूर्ण प्रभाव केवल उसके तीव्र या मद्धिम होने से ही निर्धारित नहीं होते बल्कि इससे भी निर्धारित होते हैं कि व्यक्ति उसके प्रति किस सीमा तक अनुकूलन करने में समर्थ है, निष्पादन किए जाने वाले कार्य की प्रकृति क्या है तथा क्या शोर के संबंध में भविष्यकथन किया जा सकता है और क्या उसे नियंत्रित किया जा सकता है?

प्रदूषण

पर्यावरणी प्रदूषण वायु, जल तथा भूमि प्रदूषण के रूप में हो सकता है। अवशिष्ट पदार्थ या कूड़ा जो घरों या उद्योगों से आते हैं वे वायु, जल तथा भूमि प्रदूषण के बड़े स्रोत हैं। वैज्ञानिक इस तथ्य को भली-भाँति जानते हैं कि किसी भी प्रकार का प्रदूषण शारीरिक स्वास्थ्य के लिए खतरनाक होता है। अपितु, कुछ शोध अध्ययनों ने इन प्रदूषणों के प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष *मनोवैज्ञानिक प्रभावों* को प्रदर्शित किया है। यह समझना चाहिए कि सामान्यत: किसी भी प्रकार का पर्यावरणी प्रदूषण तंत्रिका तंत्र को प्रभावित कर सकता है क्योंकि विषैले द्रव्य/पदार्थ उस सीमा तक मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं को प्रभावित कर सकते हैं। प्रदूषण के प्रभाव का एक अन्य स्वरूप प्रदूषण के प्रति उन सांवेगिक प्रतिक्रियाओं में दृष्टिगत होता है जो अस्वस्थता उत्पन्न करता है, जिसके परिणामस्वरूप कार्य-कुशलता में कमी और कार्य में अभिरुचि कम हो जाती है तथा दुश्चिंता का स्तर बढ़ जाता है। प्राय: लोग ऐसे स्थानों पर कार्य करना और रहना पसंद नहीं करते जहाँ कूड़ा फैला रहता हो या निरंतर दुर्गंध व्याप्त हो। इसी प्रकार से वायु में धूल के कणों या अन्य निलंबित कणों के कारण दम घुटने का आभास तथा श्वास लेने में कठिनाई हो सकती है, जिससे वास्तव में श्वसन-तंत्र संबंधित विकार भी उत्पन्न हो सकते हैं। वे व्यक्ति जो इस प्रकार की अस्वस्थता का अनुभव करते हैं, अपने कार्य पर पूरा ध्यान नहीं दे पाते या प्रसन्न भावदशा में नहीं रह पाते।

वायु प्रदूषण के विशिष्ट मनोवैज्ञानिक प्रभाव भी कुछ शोधकर्ताओं द्वारा बताए गए हैं। उदाहरण के लिए कोलकाता

के एक क्षेत्र में वायु प्रदूषण के प्रति, एक ऐसा समूह जो औद्योगिक क्षेत्र के निकट रहता था तथा एक दूसरा समूह जो औद्योगिक क्षेत्र से दूर आवासीय क्षेत्र में रहता था, उनकी मनोवैज्ञानिक प्रतिक्रियाओं की तुलना की गई। जो समूह औद्योगिक क्षेत्र में रहता था उसने दूसरे समूह, जो औद्योगिक क्षेत्र से दूर आवासीय क्षेत्र में रहता था, की अपेक्षा अधिक तनाव तथा और दुश्चिंता का अनुभव करने की बात स्वीकार की। जर्मनी में किए गए एक अध्ययन में ऐसे प्रदूषणकारी तत्व, जैसे – वायु में सल्फर डाइऑक्साइड की उपस्थिति द्वारा किसी कार्य पर ध्यान को केंद्रित करने की योग्यता में न्यूनता तथा निष्पादन-दक्षता का नीचे गिरना पाया गया।

खतरनाक रासायनिक द्रव्यों के रिसाव के कारण होने वाले प्रदूषण द्वारा अन्य प्रकार की क्षतियाँ हो सकती हैं। दिसंबर 1984 में हुई भोपाल गैस त्रासदी, जिसमें अनेक जानें गईं, भी गैस अपने पीछे अनेक मनोवैज्ञानिक प्रभाव छोड़ गई। अनेक ऐसे व्यक्ति जिन्होंने विषैली गैस मिथाइल आइसो साइनेट (एम.आई.सी., MIC) तथा अन्य द्रव्य सूँघ लिए थे, उनमें स्मृति, अवधान तथा जागरूकता संबंधी गड़बड़ियाँ पाई गईं।

घर तथा दफ्तर के पर्यावरण (भीतरी पर्यावरण) में भी हानिकारक वायु प्रदूषण हो सकता है। उदाहरण के लिए तंबाकू पीने के धुएँ से होने वाले प्रदूषण यानी सिगरेट, सिगार या बीड़ी पीने से होने वाले प्रदूषण के कारण भी मनोवैज्ञानिक प्रभाव हो सकते हैं। ऐसे प्रभाव सिगरेट पीने वाले व्यक्ति के लिए अधिक होते हैं, तथापि जो इस तंबाकू के धुआँ में श्वास लेता है (निष्क्रिय धूमपान), वह भी निषेधात्मक प्रभावों को भुगतता है। एक शोधकर्ता ने पाया कि तंबाकू का धुआँ श्वास के साथ भीतर खींचना व्यक्ति में आक्रामकता के स्तर को बढ़ा सकता है।

प्रदूषणकारी द्रव्यों की जल तथा मृदा (भूमि) में उपस्थिति शारीरिक स्वास्थ्य के लिए खतरनाक है। इनमें से कुछ रसायनों का खतरनाक मनोवैज्ञानिक प्रभाव भी होता है। कुछ विशिष्ट रसायनों, जैसे – सीसा की उपस्थिति मस्तिष्क के विकास को प्रभावित कर मानसिक मंदन का कारण बन सकती है। इस प्रकार के विषैले द्रव्य मानव को विभिन्न मार्गों से प्रभावित कर सकते हैं, जैसे – पानी द्वारा या मृदा के द्वारा उन साग-सब्जियों में सोख लिए जाते हैं जो प्रदूषित भूमि पर उगाई जाती हैं।

विषाक्तता का दूसरा स्रोत घरों तथा उद्योगों से निकलने वाले ऐसे अवशिष्ट पदार्थ या कूड़ा-करकट हैं जो जैविक रूप से क्षरणशील नहीं होते। इस प्रकार के अवशिष्ट पदार्थों के सामान्य उदाहरण प्लास्टिक, टीन तथा धातु से बने पात्र हैं। इस प्रकार के अवशिष्ट पदार्थों को नष्ट करने या जलाने के लिए विशिष्ट तकनीकों का उपयोग करना चाहिए तथा धुएँ को जनसाधारण के श्वसन क्रिया में आने वाली वायु में नहीं छोड़ना चाहिए।

सामान्यत:, ऐसे पर्याप्त प्रमाण हैं जो यह प्रदर्शित करते हैं कि वायु, जल तथा मृदा में विषैले रसायनों के हानिकारक प्रभाव न केवल सामान्य मनोवैज्ञानिक प्रकार्यों पर पड़ते हैं बल्कि उनके कारण गंभीर मानसिक विकार भी उत्पन्न हो सकते हैं। अत: इसमें बिलकुल संशय नहीं है कि प्रत्येक रूप में प्रदूषण को नियंत्रित करने की आवश्यकता है।

भीड़

हम में से अधिकांश भीड़ से परिचित हैं जो कि व्यक्तियों के बड़े अनौपचारिक समूह होते हैं और जो अस्थायी रूप से किसी विशिष्ट लक्ष्य या उद्देश्य के बिना ही एक साथ एकत्रित होते हैं। उदाहरण के लिए, जब कोई प्रसिद्ध व्यक्ति अचानक सड़क पर दिखाई देता है तो वे लोग जो उस स्थिति में वहाँ पर उपस्थित होते हैं, प्राय: केवल उस व्यक्ति को देखने के लिए ही एकत्रित हो जाते है। किंतु **भीड़** (crowding) का भिन्न अर्थ है। इसका संदर्भ उस असुस्थता की भावना से है जिसका कारण यह है कि हमारे आस-पास बहुत अधिक व्यक्ति या वस्तुएँ होती हैं जिससे हमें भौतिक बंधन की अनुभूति होती है तथा कभी-कभी वैयक्तिक स्वतंत्रता में न्यूनता का अनुभव होता है। एक विशिष्ट क्षेत्र या दिक् में बड़ी संख्या में व्यक्तियों की उपस्थिति के प्रति व्यक्ति की प्रतिक्रिया ही भीड़ कहलाती है। जब यह संख्या एक निश्चित स्तर से अधिक हो जाती है तब इसके कारण वह व्यक्ति जो इस स्थिति में फँस गया है दबाव का अनुभव करता है। इस अर्थ में भीड़ भी एक पर्यावरणी दबावकारक का उदाहरण है।

भीड़ के अनुभव के निम्नलिखित लक्षण होते हैं–

- असुस्थता की भावना,
- वैयक्तिक स्वतंत्रता में न्यूनता या कमी,

- व्यक्ति का अपने आस-पास के परिवेश के संबंध में निषेधात्मक दृष्टिकोण तथा
- सामाजिक अंत:क्रिया पर नियंत्रण के अभाव की भावना।

हमारे देश में अनेक मनोवैज्ञानिकों ने भीड़ के मनोवैज्ञानिक परिणामों का व्यवस्थित अध्ययन कई भारतीय नगरों, जैसे- इलाहाबाद, अहमदाबाद, पुणे, वाराणसी तथा जयपुर एवं राजस्थान के कुछ ग्रामीण क्षेत्रों में किया है। भीड़ के ऊपर इनमें से कुछ शोध अन्वेषण मनोवैज्ञानिक प्रयोगशालाओं में किए गए हैं किंतु उनसे अधिक अध्ययन सामान्य जीवन में सामने आने वाली परिस्थितियों, जैसे- घर, दफ्तर, यातायात, ऑटोरिक्शा जैसे सार्वजनिक परिवहन साधनों, सिनेमाघरों इत्यादि में किए गए हैं। हमारे देश की इतनी बड़ी जनसंख्या है कि यहाँ भीड़ अन्य कम जनसंख्या वाले देशों की तुलना में कहीं अधिक है। इस विशेषता ने कुछ विदेशी मनोवैज्ञानिकों को भीड़ के मनोवैज्ञानिक प्रभावों का अध्ययन भारत में करने के लिए प्रेरित किया है।

यह ज्ञातव्य है कि भीड़ की अनुभूति केवल बड़ी संख्या में जनसमुदाय मात्र से अथवा केवल स्थानाभाव से नहीं होती। यह **घनत्व** (density) से संबद्ध है अर्थात किसी उपलब्ध स्थान में व्यक्तियों की संख्या। उदाहरण के लिए यदि किसी रेल के डिब्बे में चार व्यक्तियों की सीट या स्थान पर पंद्रह व्यक्ति धक्कम-धक्का कर बैठने का प्रयास करें तो प्रत्येक व्यक्ति को भीड़ की अनुभूति होने की संभावना है। इन्हीं पंद्रह व्यक्तियों को एक बड़े हॉल में बैठा दीजिए तो किसी को भीड़ की अनुभूति नहीं होगी।

कोई व्यक्ति यह प्रश्न उठा सकता है- क्या भीड़ का अनुभव सदैव अधिक घनत्व वाली स्थितियों में ही होता है तथा क्या सभी व्यक्ति उसके निषेधात्मक प्रभाव समान सीमा तक ही अनुभव करते हैं? यदि आपने दोनों प्रश्नों का उत्तर 'नहीं' दिया है तो आप सही हैं। जब हम किसी मेले या विवाह उत्सव में जाते हैं तो प्राय: भौतिक विन्यास में अधिक घनत्व होता है तथा हम उसी रूप में उसका आनंद लेते हैं। अंतत: कोई मेला या विवाहोत्सव क्या होगा यदि वहाँ बहुत कम व्यक्ति हों? दूसरी ओर, यदि एक छोटे कक्ष का बहुत सारे व्यक्ति साझा उपयोग कर रहे हैं तो सबको ही परेशानी का अनुभव होता है।

भीड़ के दबावपूर्ण प्रभाव तभी पूर्णत: समझे जा सकते हैं जब हम उसके परिणामों का अवलोकन करें। भीड़ एवं अधिक घनत्व पर जो अनेक अध्ययन भारत तथा अन्य देशों में किए गए हैं उनके प्रभावों के वर्णन का सारांश नीचे दिया जा रहा है-

- भीड़ तथा अधिक घनत्व के परिणामस्वरूप *अपसामान्य व्यवहार* तथा आक्रामकता उत्पन्न हो सकते हैं। अनेक वर्षों पूर्व चूहों पर किए गए एक शोध में यह परिलक्षित हुआ था। इन प्राणियों को एक बाड़े में रखा गया, प्रारंभ में यह कम संख्या में थे। इस बंद स्थान में जैसे-जैसे उनकी जनसंख्या बढ़ने लगी, उनमें आक्रामक तथा विचित्र व्यवहार प्रकट होने लगे, जैसे - दूसरे चूहों की पूँछ काट लेना। यह आक्रामक व्यवहार इस सीमा तक बढ़ा कि अंतत: ये प्राणी बड़ी संख्या में मर गए जिससे बाड़े में उनकी जनसंख्या फिर कम हो गई। मनुष्यों में भी जनसंख्या वृद्धि के साथ कभी-कभी हिंसात्मक अपराधों में वृद्धि पाई गई है।
- भीड़ के फलस्वरूप उन कठिन कार्यों का, जिनमें संज्ञानात्मक प्रक्रियाएँ निहित होती हैं, निष्पादन निम्न स्तर का हो जाता है तथा स्मृति और संवेगात्मक दशा पर इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। ये निषेधात्मक प्रभाव उन व्यक्तियों में अल्प मात्रा में परिलक्षित होते हैं जो भीड़ वाले परिवेश के आदी होते हैं।
- वे बच्चे जो अत्यधिक भीड़ वाले घरों में बड़े होते हैं, वे निचले स्तर के शैक्षिक निष्पादन प्रदर्शित करते हैं। यदि वे किसी कार्य पर असफल होते हैं तो उन बच्चों की तुलना में जो कम भीड़ वाले घरों में बढ़ते हैं, उस कार्य पर निरंतर काम करते रहने की प्रवृत्ति भी उनमें दुर्बल होती है। अपने माता-पिता के साथ वे अधिक द्वंद्व का अनुभव करते हैं तथा उन्हें अपने परिवार से भी कम सहायता प्राप्त होती है।
- *सामाजिक अंत:क्रिया की प्रकृति* भी यह निर्धारित करती है कि व्यक्ति भीड़ के प्रति किस सीमा तक प्रतिक्रिया करेगा। उदाहरण के लिए यदि अंत:क्रिया किसी आनंददायक सामाजिक अवसर पर होती है, जैसे - किसी प्रीतिभोज अथवा सार्वजनिक समारोह में, तब संभव है कि उसी भौतिक स्थान में बड़ी संख्या में अनेक लोगों की उपस्थिति कोई भी दबाव उत्पन्न न करे।

बल्कि, इसके फलस्वरूप सकारात्मक सांवेगिक प्रतिक्रियाएँ हो सकती हैं। इसके साथ ही, भीड़ भी सामाजिक अंत:क्रिया की प्रकृति को प्रभावित करती है।

- व्यक्ति भीड़ के प्रति जो निषेधात्मक प्रभाव प्रदर्शित करते हैं, उसकी मात्रा में व्यक्तिगत भिन्नताएँ होती हैं तथा उनकी प्रतिक्रियाओं की प्रकृति में भी भेद होता है। इन व्यक्तिगत भिन्नताओं को समझाने के लिए दो प्रकार की सहिष्णुता का उल्लेख किया जा सकता है अर्थात **भीड़ सहिष्णुता** (crowding tolerance) तथा **प्रतिस्पर्धा सहिष्णुता** (competition tolerance)।

  भीड़ सहिष्णुता, अधिक घनत्व या भीड़ वाले पर्यावरण के साथ मानसिक रूप से संयोजन करने की योग्यता को संदर्भित करती है, जैसे– घर के भीतर भीड़ (एक छोटे कमरे में बड़ी संख्या में लोग)। जो लोग ऐसे पर्यावरण के आदी होते हैं जिसमें अनेक व्यक्ति उनके चारों ओर रहते ही हैं (उदाहरण के लिए वे व्यक्ति जो एक बड़े परिवार में पलकर बड़े हो रहे हैं तथा परिवार एक छोटे मकान में रहता है), वे उन लोगों की अपेक्षा जिन्हें अपने आस-पास केवल कुछ ही व्यक्तियों के रहने की आदत होती है, भीड़ सहिष्णुता अधिक विकसित कर लेते हैं। हमारे देश की जनसंख्या विशाल है तथा अनेक व्यक्ति बड़े परिवारों में परंतु छोटे मकानों में रहते हैं। इसके कारण यह प्रत्याशा होती है कि सामान्यत: भारतीयों में भीड़ सहिष्णुता कम जनसंख्या वाले देशों के वासियों की अपेक्षा अधिक होगी।

  प्रतिस्पर्धा सहिष्णुता, वह योग्यता है जिसके द्वारा कोई व्यक्ति उस स्थिति को भी सह लेता है जिसमें उसे मूल संसाधनों यहाँ तक कि भौतिक स्थान के लिए भी अनेक व्यक्तियों के साथ प्रतिस्पर्धा (प्रतियोगिता) करनी पड़ती है। चूँकि भीड़ की स्थिति में संसाधनों के लिए अधिक प्रतिस्पर्धा की संभावना होती है इसलिए उस स्थिति के प्रति प्रतिक्रिया भी संसाधनों के लिए प्रतिस्पर्धा सहिष्णुता से प्रभावित होगी।

- *सांस्कृतिक विशेषताएँ* यह निर्धारित कर सकती हैं कि एक विशिष्ट पर्यावरण आत्मनिष्ठ (व्यक्तिपरक) रूप में किस सीमा तक अधिक भीड़ या कम भीड़ वाला निर्णीत होगा। वे भीड़ के प्रति निषेधात्मक प्रतिक्रियाओं की प्रकृति तथा मात्रा को भी प्रभावित कर सकती है।

  उदाहरण के लिए जिन संस्कृतियों में जो व्यक्ति से अधिक समूह या समष्टि के महत्त्व को रेखांकित करती हैं, उनमें व्यक्ति के परिवेश में अधिक व्यक्तियों की उपस्थिति को अवांछनीय स्थिति नहीं माना जाता है। दूसरी ओर, वे संस्कृतियाँ जो व्यक्ति को समूह या समष्टि से अधिक महत्त्व देती हैं, उनमें व्यक्ति के परिवेश में अनेक व्यक्तियों की उपस्थिति उसके लिए असुविधाजनक होती है। परंतु, समग्र रूप से, चाहे संस्कृति में समूह को व्यक्ति से अधिक महत्त्व दिया जाता हो या इसके ठीक विपरीत, यह तो स्पष्ट है कि सभी संस्कृतियों में भीड़ को दबावपूर्ण ही अनुभव किया जाता है।

- **व्यक्तिगत स्थान** (personal space) या वह सुविधाजनक भौतिक स्थान जिसे व्यक्ति अपने आस-पास बनाए रखना चाहता है, अधिक घनत्व वाले पर्यावरण से प्रभावित होता है। भीड़ में व्यक्तिगत स्थान प्रतिबंधित हो जाता है तथा यह भी भीड़ के प्रति निषेधात्मक प्रतिक्रियाओं का कारण हो सकता है।

हमें अनेक ऐसे उदाहरण प्राप्त होते हैं जिनमें लोग भौतिक पर्यावरण के प्रति व्यक्तिगत स्थान के संदर्भ में प्रतिक्रिया करते हैं। सामाजिक स्थितियों में मनुष्य जिन व्यक्तियों के साथ अंत:क्रिया कर रहा होता है उनके साथ एक विशेष भौतिक (शारीरिक) दूरी बनाए रखना चाहता है। इसे **अंतर्वैयक्तिक भौतिक दूरी** (interpersonal physical distance), कहते हैं। यह एक अधिक व्यापक व्यक्तिगत स्थान के संप्रत्यय का भाग है अर्थात वह भौतिक स्थान जिसे हम अपने आस-पास बनाए रखना चाहते हैं; जैसाकि पहले वर्णन किया जा चुका है, भीड़ के प्रति निषेधात्मक प्रतिक्रिया का एक कारण व्यक्तिगत स्थान में कमी है। लोगों, स्थितियों, परिवेशों तथा संस्कृतियों में व्यक्तिगत स्थान में भिन्नताएँ पाई जाती हैं। कुछ औसत दूरियाँ विशिष्ट संस्कृतियों में प्रेक्षित की गई हैं। स्थिति पर निर्भरता के आधार पर चार प्रकार की अंतर्वैयक्तिक भौतिक दूरियों को एडवर्ड हॉल (Edward Hall) नामक मानवविज्ञानी ने बताया है–

- *अंतरंग दूरी* (18 इंच तक) - यह वह दूरी है जो आप तब बनाकर रखते हैं जब आप किसी से निजी बातचीत करते हैं या किसी घनिष्ठ मित्र या संबंधी के साथ अंत:क्रिया करते हैं।

- *व्यक्तिगत दूरी* (18 इंच से 4 फुट) – यह वह दूरी है जो आप तब बनाकर रखते हैं जब आप किसी घनिष्ठ मित्र या संबंधी के साथ एकैक अंत:क्रिया करते हैं या फिर कार्य स्थान अथवा दूसरे सामाजिक स्थिति में किसी ऐसे व्यक्ति से अकेले में बात करते हैं जो आप का बहुत अंतरंग नहीं है।
- *सामाजिक दूरी* (4 इंच से 10 फुट)– यह वह दूरी है जो आप उन अंत:क्रियाओं में बनाते हैं जो औपचारिक होते हैं, अंतरंग नहीं।
- *सार्वजनिक दूरी* (10 फीट से अनंत तक)– यह वह दूरी है जो आप औपचारिक स्थिति में, जहाँ बड़ी संख्या में लोग उपस्थित हों बनाकर रखते हैं। उदाहरण के लिए किसी सार्वजनिक वक्ता से श्रोताओं की या कक्षा में अध्यापक की दूरी होती है।

यहाँ यह ध्यान देने योग्य है कि ये दूरियाँ स्वेच्छा से बनाकर रखी जाती हैं तथा ये अंत:क्रिया में लिप्त व्यक्तियों की सुविधा को ध्यान में रखकर बनाई जाती हैं। तथापि, जब स्थान की कमी होती है तो व्यक्ति परस्पर अपेक्षाकृत छोटी भौतिक दूरियों को बलात् ही (बाध्य होकर) अपनाते हैं (उदाहरण के लिए लिफ्ट में या रेलगाड़ी के डिब्बे में जहाँ बहुत अधिक व्यक्ति होते हैं)। ऐसे जकड़े हुए स्थानों में व्यक्ति को भीड़ की अनुभूति होने की प्रबल संभावना होती है, यद्यपि वस्तुनिष्ठ रूप में व्यक्तियों की संख्या बहुत अधिक नहीं है। संक्षेप में, व्यक्ति भौतिक पर्यावरण के एक अंश के रूप में उपलब्ध स्थान के प्रति व्यवहार करते हैं। जब आवागमन की स्वतंत्रता, वैयक्तिक स्वतंत्रता का बोध तथा व्यक्तिगत स्थान की आवश्यकता सामान्य रूप से बने नहीं रह पाते हैं, तब व्यक्ति को दबाव का अनुभव होता है तथा वह निषेधात्मक प्रतिक्रिया देता है–वह खराब भावदशा में रहता है या आक्रामकता प्रदर्शित करता है तथा जितनी शीघ्रता से संभव हो उस स्थिति से बाहर निकलने का प्रयास करता है।

व्यक्तिगत स्थान का संप्रत्यय निम्नलिखित कारणों से महत्वपूर्ण है। पहला, यह भीड़ के निषेधात्मक प्रभावों को एक पर्यावरणी दबावकारक के रूप में समझाता है। दूसरा, यह हमें सामाजिक संबंधों के बारे में बताता है। उदाहरण के लिए, दो व्यक्ति यदि एक-दूसरे के काफ़ी निकट खड़े या बैठे हों तो उनका प्रत्यक्षण मित्र या संबंधी के रूप में होता है। जब आप विद्यालय के पुस्तकालय में जाते हैं और यदि आपका मित्र जिस मेज़ पर बैठा है उसके निकट का स्थान खाली है तो आप उसके निकट के स्थान पर ही बैठते हैं। किंतु यदि उस मेज़ पर कोई अपरिचित व्यक्ति बैठा है और उसके निकट स्थान खाली है तो इस बात की संभावना कम है कि आप उस व्यक्ति के निकट के स्थान पर बैठेंगे। तीसरा, हमें कुछ सीमा तक यह ज्ञात होता है कि भौतिक स्थान को किस प्रकार परिवर्तित किया जा सकता है जिससे कि सामाजिक स्थितियों में दबाव अथवा असुविधा में कमी की जा सके अथवा सामाजिक अंत:क्रिया को अधिक आनंददायक तथा उपयोगी बनाया जा सके।

यहाँ कुछ सरल उदाहरण दिए जा रहे हैं। मान लीजिए कि आपके विद्यालय के कर्मचारियों को निर्णय करना है कि कुर्सियों को कैसे व्यवस्थित किया जाए जब कि (क) विद्यालय में कोई सामाजिक अवसर, जैसे – कोई सांस्कृतिक कार्यक्रम है, (ख) अभिभावकों तथा अध्यापकों के बीच बैठक है तथा (ग) विद्यार्थियों और अध्यापकों को संबोधित करने के लिए कोई अतिथि वक्ता आ रहे हैं। क्या तीनों परिस्थितियों में कुर्सियों की व्यवस्था एक जैसी होनी चाहिए? यदि आप क्रियाकलाप 8.1 का संचालन करेंगे तो आपको और भी यह ज्ञात हो सकेगा कि भीड़ रहित स्थितियों में व्यक्ति किस प्रकार की बैठने की व्यवस्थाओं को चुनते हैं।

प्राकृतिक विपदाएँ

शोर, अनेक प्रकार के प्रदूषण तथा भीड़ ऐसे पर्यावरणी दबावकारक हैं जो मानव व्यवहार के परिणाम हैं। इनके विपरीत, प्राकृतिक विपदाएँ ऐसे दबावपूर्ण अनुभव हैं जो कि प्रकृति के प्रकोप के परिणाम हैं अर्थात जो प्राकृतिक पर्यावरण में अस्तव्यस्तता के परिणामस्वरूप उत्पन्न होते हैं। प्राकृतिक विपदाओं के सामान्य उदाहरण भूकंप, सुनामी, बाढ़, तूफ़ान तथा ज्वालामुखीय उद्गार हैं। अन्य विपदाओं के भी उदाहरण मिलते हैं, जैसे – युद्ध, औद्योगिक दुर्घटनाएँ (जैसे– औद्योगिक कारखानों में विषैली गैस अथवा रेडियो-सक्रिय तत्वों का रिसाव) अथवा महामारी (उदाहरण के लिए, प्लेग जिसने 1994 में हमारे देश के अनेक क्षेत्रों में तबाही मचाई थी)। किंतु, युद्ध तथा महामारी मानव द्वारा रचित घटनाएँ हैं, यद्यपि उनके प्रभाव भी उतने ही गंभीर हो सकते हैं जैसे कि प्राकृतिक विपदाओं के। इन

क्रियाकलाप 8.1

लोग किस प्रकार की बैठने की व्यवस्था को वरीयता देते हैं?

*निम्नलिखित रेखाचित्र, **अ**, **ब**, और **स** 5 ऐसे व्यक्तियों को दिखाइए जिन्हें आप जानते हैं तथा उनसे पूछिए कि वे **'पी'** लिखकर उस स्थान को दर्शाएँ जहाँ वे बैठना चाहेंगे। इन चित्रों में '**X** ('गुणा' का चिह्न) उस व्यक्ति को इंगित करता है जो कि पहले से ही वहाँ बैठा हुआ है।*

इन 5 व्यक्तियों ने जो स्थान चुने हैं उन्हें चिह्नित कीजिए। क्या इन व्यक्तियों ने एक ही स्थान का चयन किया है? चुने हुए स्थानों की तुलना करके आप इस अभ्यास की पुनरावृत्ति कर सकते हैं, कब रेखाचित्र 'अ' में X एक मित्र है, कब रेखाचित्र 'ब' में X एक अपरिचित व्यक्ति है तथा कब रेखाचित्र 'स' में X एक ऐसा व्यक्ति है जिसे आप भलीभाँति जानते हैं।

अ. *X आपका मित्र है, कैंटीन में आप उसके साथ बैठकर चायपान करने जा रहे हैं।*

ब. *X को आप भलीभाँति नहीं जानते हैं तथा आपको उसके साथ दल के सदस्य के रूप में कार्य करना है।*

स. *X को आप भलीभाँति जानते हैं, आप दोनों एक प्रतियोगिता में भाग लेने जा रहे हैं, जिसमें दोनों ही विजयी होना चाहते हैं।*

आप कहाँ बैठना चाहेंगे? कृपया 'पी' लिख कर उस स्थान को दर्शाइए।

रेखाचित्र 'अ'

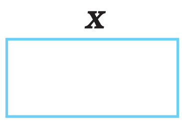

रेखाचित्र 'ब'

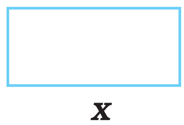

रेखाचित्र 'स'

घटनाओं को 'विपदा' इसलिए कहते हैं क्योंकि इन्हें रोका नहीं जा सकता, प्रायः ये बिना किसी चेतावनी के आती हैं तथा मानव जीवन एवं संपत्ति को इनसे अत्यधिक क्षति पहुँचती है। दुखद यह है कि ये मनोवैज्ञानिक विकार, जिसे अभिघातज उत्तर दबाव विकार कहते हैं, का भी कारण बनते हैं। विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी अब पर्याप्त रूप से विकसित हो चुके हैं जिससे मानव को इन घटनाओं की भविष्यवाणी करना संभव हो गया है। फिर भी प्राकृतिक विपदाओं के मनोवैज्ञानिक प्रभावों को समझने तथा उनके प्रतिकार के उपाय ढूँढ़ने की आवश्यकता है।

प्राकृतिक विपदाओं के प्रभाव क्या हैं? पहला, उनके पश्चात सामान्य जन निर्धनता की चपेट में आ जाते हैं, बेघर तथा संसाधन रहित हो जाते हैं और अक्सर इसके साथ-साथ जिन सब वस्तुओं पर उनका स्वामित्व था, वह सब भी क्षतिग्रस्त तथा नष्ट हो जाती हैं। दूसरा, धन-संपत्ति तथा प्रियजनों के अचानक लुप्त या खो जाने से व्यक्ति स्तब्ध तथा भौचक हो जाते हैं। यह सब एक गहन मनोवैज्ञानिक विकार को उत्पन्न करने के लिए पर्याप्त होता है। प्राकृतिक विपदाएँ **अभिघातज अनुभव** (traumatic experiences) होते हैं, अर्थात विपदा के पश्चात जीवित व्यक्तियों के लिए सांवेगिक रूप से आहत करने वाले तथा स्तब्ध कर देने वाले होते हैं अभिघातज उत्तर दबाव विकार (पी.टी.एस.डी.) एक गंभीर मनोवैज्ञानिक समस्या है जो अभिघातज घटनाओं, जैसे – प्राकृतिक विपदाओं के कारण उत्पन्न होती है। इस विकार के निम्नलिखित लक्षण हैं–

- किसी विपदा के प्रति *तात्कालिक प्रतिक्रिया* सामान्यतः अनभिविन्यास (आत्म-विस्मृति) की होती है। सामान्य जन को यह समझने में कुछ समय लगता है कि इस विपदा का पूरा अर्थ क्या है तथा इसने उनके जीवन में क्या कर दिया है। कभी-कभी वे स्वयं अपने से यह स्वीकार नहीं करते कि उनके साथ कोई भयंकर घटना घटी है। इन तात्कालिक प्रतिक्रियाओं के पश्चात शारीरिक प्रतिक्रियाएँ होती हैं।
- *शारीरिक प्रतिक्रयाएँ* – जैसे, बिना कार्य किए भी शारीरिक परिश्रांति, निद्रा में कठिनाई, भोजन के संरूप में परिवर्तन, हृदयगति और रक्तचाप में वृद्धि तथा एकाएक चौंक पड़ना पीड़ित व्यक्तियों में सरलता से दृष्टिगत होते हैं।

- *सांवेगिक प्रतिक्रियाएँ,* जैसे- शोक एवं भय, चिड़चिड़ापन, क्रोध ("यह मेरे ही साथ क्यों घटित हुआ?") असहायता की भावना, निराशा ("इस घटना का निवारण करने के लिए मैं कुछ न कर सका/सकी") अवसाद, कभी-कभी पूर्ण संवेग-शून्यता (सुन्नता), अपराध-भावना कि व्यक्ति स्वंय जीवित है जबकि परिवार के किसी सदस्य की मृत्यु हो गई, स्वयं अपने को दोष देना तथा जीवन के नेमी क्रियाकलापों (routine activities) में भी अभिरुचि का अभाव।
- *संज्ञानात्मक प्रतिक्रयाएँ,* जैसे - आकुलता, एकाग्रता में कठिनाई, अवधान विस्तृति में कमी, संभ्रम, स्मृतिलोप या ऐसी सुस्पष्ट स्मृतियाँ जो वांछित नहीं है (अथवा, घटना का दु:स्वप्न)।
- *सामाजिक प्रतिक्रियाएँ,* जैसे - दूसरों से विनिवर्तन (withdrawal), दूसरों के साथ द्वंद्व, प्रियजनों के साथ भी अक्सर विवाद और अस्वीकृत महसूस करना या अलग-थलग पड़ जाना। यह आश्चर्यजनक है कि अक्सर कुछ उत्तरजीवी, दबाव के प्रति प्रबल सांवेगिक प्रतिक्रियाओं के मध्य में भी, वास्तव में स्वस्थ होने की प्रक्रिया में दूसरों के लिए सहायक होते हैं। इन अनुभवों का सामना करने के बाद भी जीवित बच जाने तथा अपना अस्तित्व बचाए रखने से ये व्यक्ति जीवन के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित कर लेते हैं तथा तदनुभूति के द्वारा, इस अभिवृत्ति को दूसरे उत्तरजीवियों में विकसित कराने में समर्थ हो जाते हैं।

ये प्रतिक्रियाएँ दीर्घकाल तक चलती रह सकती हैं, यहाँ तक कि कुछ दशाओं में तो जीवनपर्यंत भी चलती हैं। किंतु उपयुक्त परामर्श तथा मनोरोग-उपचार के द्वारा पी.टी.एस.डी. में सुधार कम से कम इस सीमा तक किया जा सकता है कि पीड़ित व्यक्तियों को अभिप्रेरित किया जा सके एवं उनकी सहायता की जा सके ताकि वे नए जीवन का प्रारंभ कर सकें। निर्धन व्यक्ति, वे महिलाएँ जिनके संबंधी हताहत हो गए हैं तथा प्राकृतिक विपदाओं के उत्तरजीवी अनाथ बच्चों को विशेष उपचार एवं देखभाल की आवश्यकता होती है। जैसा कि अन्य पर्यावरणी दबावकारकों के विषय में सत्य है, प्राकृतिक विपदाओं के प्रति भी लोग भिन्न स्तर की तीव्रता वाली प्रतिक्रियाएँ करते हैं। सामान्यत: प्रतिक्रिया की तीव्रता निम्नलिखित तत्वों से प्रभावित होती है-

- विपदा की तीव्रता तथा उसके द्वारा की गई क्षति (संपत्ति एवं जीवन दोनों के संबंध में),
- व्यक्ति की सामना करने की सामान्य योग्यता तथा
- विपदा के पूर्व अन्य दबावपूर्ण अनुभव। उदाहरण के लिए, जिन व्यक्तियों ने पहले भी दबावपूर्ण स्थितियों का अनुभव किया है उन्हें फिर एक और कठिन और दबावपूर्ण स्थिति से निपटने में अधिक कठिनाई हो सकती है।

यद्यपि हम जानते हैं कि अधिकांश प्राकृतिक विपदाओं की केवल सीमित स्तर तक ही भविष्यवाणी की जा सकती है किंतु उनके विध्वंशक परिणामों को कम करने हेतु कई प्रकार की तैयारी की जा सकती है, जैसे- (क) चेतावनी, (ख) सुरक्षा उपायों के द्वारा जो घटना के तुरंत बाद किए जा सकें तथा (ग) मनोवैज्ञानिक विकारों के उपचार द्वारा। ये उपाय प्राय: सामुदायिक स्तर पर किए जाते हैं तथा निम्नलिखित हैं-

- **चेतावनी** - यदि आप पिछले कुछ समय से रेडियो सुनते रहे हैं तो आपने ऐसे विज्ञापनों को सुना होगा जिनमें यह बताया जाता है कि लोगों को यदि प्राकृतिक विपदाओं, जैसे- बाढ़ की संभावना हो तो क्या करना उचित है। जब तूफ़ान या समुद्र में ज्वार का भविष्यकथन किया जाता है तब मछुआरों को समुद्र में न जाने के सुझाव दिए जाते हैं।
- **सुरक्षा उपाय** - यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि कुछ प्राकृतिक विपदाओं, जैसे- भूकंप में यदि भविष्यवाणी कर भी दी जाए तब भी घटनाएँ इतनी आकस्मिक होती हैं कि लोगों को चेतावनी देना तथा उन्हें मानसिक रूप से तैयार करना संभव नहीं हो पाता है। इसलिए पहले से ही कुछ संकेत (सुझाव) इस संबंध में दे दिए जाते हैं कि यदि भूकंप आ जाए तो क्या किया जाना चाहिए।
- **मनोवैज्ञानिक विकारों का उपचार** - इसके अंतर्गत स्वावलंबन उपागम तथा व्यावसायिक उपचार दोनों ही निहित होते हैं। अक्सर सर्वप्रथम लोगों को भौतिक सहायता, जैसे-भोजन, वस्त्र, औषधि तथा उपचार, शरण या आश्रय तथा वित्तीय सहायता इत्यादि प्रदान

करना आवश्यक होता है। वैयक्तिक तथा समूह परामर्श इसके बाद अगला सोपान है। इसके अनेक प्रकार हो सकते हैं, जैसे– उत्तरजीवियों को अपने अनुभव तथा सांवेगिक दशाओं का वर्णन करने के लिए प्रोत्साहित करना तथा उनके सांवेगिक घावों को भरने के लिए समय प्रदान करना। कुछ विशेषज्ञों जो पी.टी.एस.डी. का उपचार करते हैं, के अनुसार एक प्रमुख अभिवृत्ति जिसे उत्तरजीवियों में विकसित करने की आवश्यकता होती है, वह है **आत्म-सक्षमता** (self-efficacy) अर्थात यह विश्वास कि "मैं यह कर सकता/सकती हूँ" या "मैं इस दशा से सफलतापूर्वक बाहर निकल सकता/सकती हूँ"। जिन व्यक्तियों में तीव्र दबाव प्रतिक्रियाएँ परिलक्षित होती हैं उन्हें मनोरोग-उपचार की आवश्यकता हो सकती है। अंत में, पुनःस्थापन या पुनर्वास अर्थात कोई रोजगार तथा धीरे-धीरे सामान्य दिनचर्या पर वापस लौटना होता है। किसी समय उत्तरजीवियों तथा पीड़ितों की अनुवर्ती जाँच की भी आवश्यकता यह ज्ञात करने के लिए होती है कि अभिघातज अनुभव से वे पर्याप्त स्वास्थ्य लाभ कर चुके हैं अथवा नहीं।

यह ध्यान देने योग्य है कि यद्यपि शोर, वायु तथा जल के कारण प्रदूषण तो व्याप्त हैं ही किंतु कुछ उपाय ऐसे हैं जिनको सामुदायिक स्तर पर अमल में लाने से हमारा मूल्यवान पर्यावरण कम प्रदूषित तथा अधिक स्वास्थ्यप्रदायी हो सकता है। जहाँ तक भीड़ का प्रश्न है, यह पूर्णतः मानव-निर्मित समस्या है। प्राकृतिक विपदाएँ स्वभावतः मानव नियंत्रण के परे हैं। फिर भी व्यक्ति आवश्यक सावधानी का उपयोग कर सकते हैं।

क्रियाकलाप 8.2

अपने अध्यापक से कहिए कि वे आपको अपने सहपाठियों के साथ मिलकर भूमिका-निर्वाह का संचालन करने में सहायता करें। कुछ विद्यार्थी किसी प्राकृतिक विपदा के पीड़ित व्यक्तियों की भूमिका का निर्वाह करें जो पी.टी.एस.डी. के लक्षण प्रकट कर रहे हैं, तथा कुछ अन्य विद्यार्थी परामर्शदाता की भूमिका का निर्वाह करें। परामर्शदाता के व्यवहारों के संबंध में अपने सहपाठियों तथा अध्यापक का मत प्राप्त कीजिए।

पर्यावरण-उन्मुख व्यवहार को प्रोत्साहन

पर्यावरण-उन्मुख व्यवहार (pro-environmental behaviour) के अंतर्गत वे दोनों प्रकार के व्यवहार आते हैं जिनका उद्देश्य पर्यावरण का समस्याओं से संरक्षण करना है तथा स्वस्थ पर्यावरण को उन्नत करना है। प्रदूषण से पर्यावरण का संरक्षण करने के लिए कुछ प्रोत्साहक क्रियाएँ निम्नलिखित हैं—

- *वायु प्रदूषण को कम* किया जा सकता है, वाहनों को अच्छी हालत में रखने से अथवा ईंधन रहित वाहन चलाने से और धूम्रपान की आदत छोड़ने से।
- शोर के प्रदूषण में कमी लाई जा सकती है, यह सुनिश्चित करके कि शोर का प्रबलता-स्तर मद्धिम हो। उदाहरण के लिए सड़क पर अनावश्यक हॉर्न बजाने को कम कर अथवा ऐसे नियमों का निर्माण कर जो शोर वाले संगीत को कुछ विशेष समय पर प्रतिबंधित कर सकें।
- *कूड़ा-करकट से निपटने का उपयुक्त प्रबंधन,* उदाहरण के लिए जैविक रूप से नष्ट होने वाले तथा जैविक रूप से नष्ट नहीं होने वाले अवशिष्ट कूड़े को पृथक कर या रसोईघर की अवशिष्ट सामग्री से खाद बना कर। इस प्रकार के उपायों का उपयोग घर तथा सार्वजनिक स्थानों पर किया जाना चाहिए। औद्योगिक तथा अस्पताल की अवशिष्ट सामग्रियों के प्रबंधन पर विशेष ध्यान देना आवश्यक है।
- *वृक्षारोपण करना तथा उनकी देखभाल की व्यवस्था,* यह ध्यान में रखकर करने की आवश्यकता है कि ऐसे पौधे और वृक्ष नहीं लगाने चाहिए जो स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हों।
- *प्लास्टिक के उपयोग का किसी भी रूप में निषेध करना,* इस प्रकार ऐसी विषैली अवशिष्ट सामग्रियों को कम करना जिनसे जल, वायु तथा मृदा का प्रदूषण होता है।
- *उपभोक्ता वस्तुओं का वेष्टन या पैकेज जैविक रूप से नष्ट नहीं होने वाले पदार्थों में कम बनाना।*
- *ऐसे निर्माण संबंधी नियमों को बनाना (विशेष रूप से शहरी क्षेत्रों में) जो इष्टतम पर्यावरणी अभिकल्प का उल्लंघन न करने दें।*

मनोविज्ञान तथा सामाजिक सरोकार

यदि आप किसी से हमारे समाज के समक्ष प्रमुख समस्याओं को सूचीबद्ध करने को कहें, तो आप काफ़ी सीमा तक निश्चित रूप से कह सकते हैं कि अन्य समस्याओं के साथ-साथ दो समस्याओं का उल्लेख अवश्य होगा– *निर्धनता* तथा *हिंसा।* इन दोनों गोचरों का लोगों के शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य पर विशेष प्रभाव पड़ता है। यह ज्ञातव्य है कि निर्धनता केवल आर्थिक समस्या नहीं है तथा हिंसा का तात्पर्य केवल कानून को तोड़ने से नहीं है। इन समस्याओं का समाधान करने के लिए यह आवश्यक है कि इनके मनोवैज्ञानिक कारणों का परीक्षण किया जाए। मनोवैज्ञानिकों ने इन प्रश्नों का सक्रिय अन्वेषण किया है तथा इन गोचरों के कारणों तथा परिणामों पर अपना ध्यान केंद्रित किया है। इनमें से प्रत्येक सामाजिक सरोकार का विवेचन नीचे दिया गया है।

निर्धनता तथा भेदभाव

इस बात पर सर्व सहमति है कि निर्धनता हमारे समाज के लिए एक अभिशाप है और जितनी शीघ्रता से हम इसका निराकरण कर सकें, समाज के लिए उतना ही भला होगा। कुछ विशेषज्ञ **निर्धनता** (poverty) को प्रमुखतः आर्थिक अर्थ में ही परिभाषित करते हैं तथा उसका मापन आय, पोषण (प्रति व्यक्ति दैनिक कैलोरी अंतरग्रहण) तथा जीवन की मूल आवश्यकताओं, जैसे – भोजन, वस्त्र तथा शरणस्थान (मकान) पर कितनी धनराशि व्यय की जा रही है, के आधार पर ही करते हैं। कुछ अन्य संकेतकों जैसे– शारीरिक स्वास्थ्य तथा साक्षरता का भी उपयोग किया जाता है। कुछ संदर्भों में ऐसी मापों का उपयोग अभी भी प्रचिलित है। फिर भी सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से आर्थिक तथा अन्य भौतिक पक्ष निर्धनता की कहानी के एक बहुत छोटे-से अंश का ही वर्णन करते हैं। समाज-मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से निर्धनता की सर्वमान्य परिभाषा है कि यह एक ऐसी दशा है जिसमें जीवन में आवश्यक वस्तुओं का अभाव होता है तथा इसका संदर्भ समाज में धन अथवा संपत्ति का असमान वितरण होता है।

कुछ लेखक उपरोक्त परिभाषा में यह भी जोड़ते हैं कि **वंचन** (deprivation) तथा **सामाजिक असुविधा** (social disadvantage) निर्धनता के अन्य लक्षण हैं। वंचन तथा निर्धनता के बीच एक विभेद यह है कि वंचन उस दशा को संदर्भित करता है जिसमें व्यक्ति अनुभव करता है कि उसने कोई मूल्यवान वस्तु खो दी है तथा उसे वह प्राप्त नहीं हो रही है जिसके लिए वह योग्य या सुपात्र है। जबकि निर्धनता का अर्थ ऐसे संसाधनों की वास्तविक कमी है जो जीविका के लिए आवश्यक हैं तथा इसलिए उसे कुछ सीमा तक वस्तुनिष्ठ रूप में परिभाषित किया जा सकता है। वंचन में अधिक महत्वपूर्ण यह होता है कि व्यक्ति ऐसा प्रत्यक्षण करता है अथवा सोचता है कि उसे जो कुछ उपलब्ध है वह उससे बहुत कम है जो उसको उपलब्ध होना चाहिए। अतः कोई निर्धन व्यक्ति वंचन का अनुभव कर सकता है किंतु वंचन का अनुभव करने के लिए निर्धनता कोई आवश्यक दशा नहीं है। निर्धन व्यक्तियों की दशा और भी बुरी हो जाती है यदि वे निर्धनता के साथ वंचन का भी अनुभव करते हैं। वास्तविकता तो यह है कि प्रायः निर्धन व्यक्ति वंचन का भी अनुभव करते हैं।

निर्धनता तथा वंचन दोनों का ही संबंध सामाजिक असुविधा से है अर्थात वह स्थिति जिसके कारण समाज के कुछ वर्गों को उन सुविधाओं का उपयोग नहीं करने दिया जाता है जो कि समाज के शेष वर्गों के व्यक्ति करते हैं। समाज के इन वर्गों की संवृद्धि के लिए सामाजिक असुविधा एक बाधा का कार्य करती है। हमारे समाज में जाति व्यवस्था बहुत सीमा तक सामाजिक असुविधा का स्रोत रही है किंतु जाति का ध्यान किए बिना भी निर्धनता ने सामाजिक असुविधा उत्पन्न करने में बड़ी भूमिका निभाई है।

इसके अतिरिक्त, जाति तथा निर्धनता के कारण सामाजिक असुविधा द्वारा **सामाजिक भेदभाव या विभेदन** (social discrimination) की समस्या उत्पन्न हुई है। अध्याय 6 तथा 7 के अध्ययन से आपको याद होगा कि भेदभाव प्रायः पूर्वाग्रह से संबंधित होते हैं। निर्धनता के संदर्भ में भेदभाव का अर्थ उन व्यवहारों से है जिनके द्वारा निर्धन तथा धनी के बीच विभेद किया जाता है जिससे धनी तथा सुविधासंपन्न व्यक्तियों का निर्धन तथा सुविधावंचित व्यक्तियों की अपेक्षा अधिक पक्षपात किया जाता है। यह विभेद सामाजिक अंतःक्रिया, शिक्षा तथा रोज़गार के क्षेत्रों में देखी जा सकती है। इस प्रकार, निर्धन या सुविधावंचित

व्यक्तियों में क्षमता होते हुए भी उन्हें उन अवसरों से दूर रखा जाता है जो समाज के बाकी लोगों को उपलब्ध होते हैं। निर्धनों के बच्चों को अच्छे विद्यालयों में अध्ययन करने या अच्छी स्वास्थ्य सुविधाओं का उपयोग करने तथा रोज़गार के अवसर नहीं मिलते हैं। सामाजिक असुविधा तथा भेदभाव के कारण निर्धन अपनी सामाजिक-आर्थिक दशा को अपने प्रयासों से उन्नत करने में बाधित हो जाते हैं और इस प्रकार निर्धन और भी निर्धन होते जाते हैं। संक्षेप में, निर्धनता तथा भेदभाव इस प्रकार से संबद्ध हैं कि भेदभाव निर्धनता का कारण तथा परिणाम दोनों ही हो जाता है। यह सुस्पष्ट है कि निर्धनता या जाति के आधार पर भेदभाव सामाजिक रूप से अन्यायपूर्ण है तथा उसे हटाना ही होगा।

निर्धनता को हर समाज समाप्त करना चाहता है। इस दिशा में अग्रसर होने के लिए निर्धनता तथा वंचन की मनोवैज्ञानिक विमाओं तथा उनके मुख्य कारणों को जानना आवश्यक है।

निर्धनता तथा वंचन की मनोवैज्ञानिक विशेषताएँ तथा उनके प्रभाव

निर्धनता तथा वंचन हमारे समाज की सुस्पष्ट समस्याओं में से हैं। भारतीय समाज-विज्ञानियों ने जिनमें समाजशास्त्री, मनोवैज्ञानिक तथा अर्थशास्त्री सभी शामिल हैं, समाज के निर्धन एवं वंचित वर्गों के ऊपर सुव्यवस्थित शोधकार्य किए हैं। उनके निष्कर्ष तथा प्रेक्षण यह प्रदर्शित करते हैं कि निर्धनता तथा वंचन के प्रतिकूल प्रभाव *अभिप्रेरणा, व्यक्तित्व, सामाजिक व्यवहार, संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं* तथा *मानसिक स्वास्थ्य* पर परिलक्षित होते हैं।

- अभिप्रेरणा के संबंध में पाया गया है कि निर्धन व्यक्तियों में निम्न आकांक्षा स्तर और दुर्बल उपलब्धि अभिप्रेरणा तथा निर्भरता की प्रबल आवश्यकता परिलक्षित होती हैं। वे अपनी सफलताओं की व्याख्या भाग्य के आधार पर करते हैं न कि योग्यता तथा कठिन परिश्रम के आधार पर। सामान्यतः उनका यह विश्वास होता है कि उनके बाहर जो घटक हैं वे उनके जीवन की घटनाओं को नियंत्रित करते हैं, उनके भीतर के घटक नहीं।
- जहाँ तक व्यक्तित्व का संबंध है निर्धन एवं वंचित व्यक्तियों में आत्म-सम्मान का निम्न स्तर और दुश्चिंता तथा अंतर्मुखता का उच्च स्तर पाया जाता है। वे भविष्योन्मुखता की तुलना में आसन्न वर्तमान के ही विचारों में खोए रहते हैं। वे बड़े किंतु सुदूर पुरस्कारों की तुलना में छोटे किंतु तात्कालिक पुरस्कारों को अधिक वरीयता देते हैं क्योंकि उनके प्रत्यक्षण के अनुसार भविष्य बहुत ही अनिश्चित है। वे निराशा, शक्तिहीनता और अनुभूत अन्याय के बोध के साथ जीते हैं तथा अपनी अनन्यता के खो जाने का अनुभव करते हैं।
- सामाजिक व्यवहार के संदर्भ में निर्धन तथा वंचित वर्ग समाज के शेष वर्गों के प्रति अमर्ष या विद्वेष की अभिवृत्ति रखते हैं।
- संज्ञानात्मक प्रकार्यों पर दीर्घकालीन वंचन के प्रभाव के संबंध में यह पाया गया है कि निम्न की अपेक्षा उच्च वंचन स्तर के पीड़ित व्यक्तियों में ऐसे कृत्यों (जैसे - वर्गीकरण, शब्दिक तर्क, काल प्रत्यक्षण तथा चित्र गहनता प्रत्यक्षण) पर बौद्धिक क्रियाएँ तथा निष्पादन निम्न स्तर के होते हैं। यह भी स्पष्ट हो चुका है कि वंचन का प्रभाव इसलिए होता है क्योंकि जिस परिवेश में बच्चे पल कर बड़े होते हैं-चाहे वह साधनसंपन्न हों या कंगाल, वह उनके संज्ञानात्मक विकास को प्रभावित करता है तथा यह उनके संज्ञानात्मक कृत्य निष्पादन में परिलक्षित होता है।
- जहाँ तक मानसिक स्वास्थ्य का संबंध है, मानसिक विकारों तथा निर्धनता या वंचन में ऐसा संबंध है जिस पर प्रश्नचिह्न भी नहीं लगाया जा सकता। निर्धन व्यक्तियों में कुछ विशिष्ट मानसिक रोगों से पीड़ित होने की संभावना, धनी व्यक्तियों की अपेक्षा, संभवतः इसलिए बढ़ जाती है क्योंकि वे मूल आवश्यकताओं के विषय में निरंतर चिंतित रहते हैं, असुरक्षा की भावना अथवा चिकित्सा-सुविधाओं, विशेष रूप से मानसिक रोगों के लिए, की अनुपलब्धता से ग्रस्त रहते हैं। वस्तुतः यह सुझाव भी दिया है कि अवसाद प्रमुखतया निर्धन व्यक्तियों का ही मानसिक विकार है। इसके अतिरिक्त, निर्धन व्यक्ति निराशा-भावना तथा अनन्यता के खो जाने का भी ऐसे अनुभव करते हैं जैसे कि वे समाज के अंग ही नहीं हैं। इसके परिणामस्वरूप वे संवेगात्मक तथा समायोजन संबंधी समस्याओं से भी पीड़ित होते हैं।

निर्धनता के प्रमुख कारण

कभी-कभी निर्धनता प्राकृतिक विपदाओं, जैसे - भूकंप, बाढ़ तथा तूफ़ान अथवा मानव-निर्मित विपदाओं, जैसे - विषैली

गैस के रिसाव के कारण होती है। जब ऐसी घटनाएँ घटित होती हैं तो व्यक्तियों की समस्त धन-संपत्ति एकाएक नष्ट हो जाती हैं तथा उन्हें निर्धनता का सामना करना पड़ता है। इसी प्रकार जब निर्धन व्यक्तियों की एक पीढ़ी अपनी निर्धनता का उन्मूलन करने में असमर्थ रहती है तब उनकी अगली पीढ़ी भी निर्धनता में ही जीवित रहती है। इन कारणों के अतिरिक्त निर्धनता के लिए उत्तरदायी अन्य कारकों का वर्णन नीचे किया गया है। किंतु इन कारकों के महत्त्व के संबंध में कुछ मतभेद हैं–

- निर्धन स्वयं अपनी निर्धनता के लिए उत्तरदायी होते हैं। इस मत के अनुसार, निर्धन व्यक्तियों में योग्यता तथा अभिप्रेरणा दोनों की कमी होती है जिसके कारण वे प्रयास करके उपलब्ध अवसरों का लाभ नहीं उठा पाते। सामान्यत: निर्धन व्यक्तियों के विषय में यह मत निषेधात्मक है तथा उनकी स्थिति को उत्तम बनाने में तनिक भी सहायता नहीं करता है।
- निर्धनता का कारण कोई व्यक्ति नहीं अपितु एक विश्वास व्यवस्था, जीवन शैली तथा वे मूल्य हैं जिनके साथ वह पल कर बड़ा हुआ है। यह विश्वास व्यवस्था, जिसे **'निर्धनता की संस्कृति'** (culture of poverty) कहा जाता है, व्यक्ति को यह मनवा या स्वीकार करवा देती है कि वह तो निर्धन ही रहेगा/रहेगी तथा यह विश्वास एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित होता रहता है।
- आर्थिक, सामाजिक तथा राजनीतिक कारक मिलकर निर्धनता का कारण बनते हैं। भेदभाव के कारण समाज के कुछ वर्गों को जीविका की मूल आवश्यकताओं की पूर्ति करने के अवसर भी नहीं दिए जाते। आर्थिक व्यवस्था को सामाजिक तथा राजनीतिक शोषण के द्वारा वैषम्यपूर्ण (असंगत) तरह से विकसित किया जाता है जिससे कि निर्धन इस दौड़ से बाहर हो जाते हैं। ये सारे कारक सामाजिक असुविधा के संप्रत्यय में समाहित किए जा सकते हैं जिसके कारण निर्धन सामाजिक अन्याय, वंचन, भेदभाव तथा अपवर्जन का अनुभव करते हैं।
- वह भौगोलिक क्षेत्र, व्यक्ति जिसके निवासी हों, उसे निर्धनता का एक महत्वपूर्ण कारण माना जाता है। उदाहरण के लिए वे व्यक्ति जो ऐसे क्षेत्रों में रहते हैं जिनमें प्राकृतिक संसाधनों का अभाव होता है (जैसे- मरुस्थल) तथा जहाँ की जलवायु भीषण होती है (जैसे- अत्यधिक सर्दी या गर्मी) प्राय: निर्धनता के शिकार हो जाते हैं। यह कारक मानव द्वारा नियंत्रित नहीं किया जा सकता है। फिर भी इन क्षेत्रों के निवासियों की सहायता के लिए प्रयास अवश्य किए जा सकते हैं ताकि वे जीविका के वैकल्पिक उपाय खोज सकें तथा उन्हें उनकी शिक्षा एवं रोज़गार हेतु विशेष सुविधाएँ उपलब्ध कराई जा सकें।
- **निर्धनता चक्र** (poverty cycle) भी निर्धनता का एक अन्य महत्वपूर्ण कारण है जो यह व्याख्या करता है कि निर्धनता उन्हीं वर्गों में ही क्यों निरंतर बनी रहती है। निर्धनता ही निर्धनता की जननी भी है। निम्न आय तथा संसाधनों के अभाव से प्रारंभ कर निर्धन व्यक्ति निम्न स्तर के पोषण तथा स्वास्थ्य, शिक्षा के अभाव तथा कौशलों के अभाव से पीड़ित होते हैं। इनके कारण उनके रोज़गार पाने के अवसर भी कम हो जाते हैं जो पुन: उनकी निम्न आय स्थिति तथा निम्न स्तर के स्वास्थ्य एवं पोषण स्थिति को सतत रूप से बनाए रखते हैं। इनके परिणामस्वरूप निम्न अभिप्रेरणा स्तर स्थिति को और भी खराब कर देता है; यह चक्र पुन: प्रारंभ होता है और चलता रहता है। इस प्रकार निर्धनता चक्र में उपर्युक्त विभिन्न कारकों की अंत:क्रियाएँ सन्निहित होती हैं तथा इसके परिणामस्वरूप वैयक्तिक अभिप्रेरणा, आशा तथा नियंत्रण-भावना में न्यूनता आती है।

निर्धनता एवं वंचन से संबद्ध समस्याओं से निपटने का मार्ग केवल सक्रियता एवं पुरजोर तरीके से उनको दूर करने अथवा कम करने के उपाय करना ही है। इस संबंध में कुछ उपायों का वर्णन नीचे किया गया है।

निर्धनता उपशमन के उपाय

निर्धनता एवं उसके निषेधात्मक परिणामों को उपशमित अथवा कम करने के लिए सरकार तथा अन्य समूहों द्वारा अनेक कार्य किए जा रहे हैं।

- निर्धनता चक्र को तोड़ना तथा निर्धन व्यक्तियों को आत्मनिर्भर बनाने हेतु सहायता करना–प्रारंभ में निर्धन व्यक्तियों को वित्तीय सहायता, चिकित्सापरक एवं अन्य सुविधाएँ उपलब्ध कराना आवश्यक हो सकता है। यह ध्यान रखने की आवश्यकता होती है कि निर्धन व्यक्ति

इस वित्तीय एवं अन्य प्रकार की सहायताओं और स्रोतों पर अपनी जीविका के लिए निर्भर न हो जाएँ।

- ऐसे संदर्भों का निर्माण जो निर्धन व्यक्तियों को उनकी निर्धनता के लिए दोषी ठहराने के बजाय उन्हें उत्तरदायित्व सिखाए – इस उपाय के द्वारा उन्हें आशा, नियंत्रण एवं अनन्यता की भावनाओं को दोबारा अनुभव करने में सहायता मिलेगी।
- सामाजिक न्याय के सिद्धांतों का पालन करते हुए शैक्षिक एवं रोज़गार के अवसर उपलब्ध कराना – इस उपाय के द्वारा निर्धन व्यक्तियों को अपनी योग्यताओं तथा कौशलों को पहचानने में सहायता मिलेगी जिससे वे समाज के अन्य वर्गों के समकक्ष आने में समर्थ हो सकें। यह कुंठा को कम करके अपराध एवं हिंसा को भी कम करने में सहायक होगा तथा निर्धन व्यक्तियों को अवैध साधनों के बजाय, वैध साधनों से जीविकोपार्जन करने हेतु प्रोत्साहित करेगा।
- उन्नत मानसिक स्वास्थ्य हेतु उपाय निर्धनता न्यूनीकरण के अनेक उपाय उनके शारीरिक स्वास्थ्य को तो सुधारने में सहायता करते हैं किंतु उनके मानसिक स्वास्थ्य की समस्या का समाधान प्रभावी ढ़ंग से करना फिर भी आवश्यक होता है। यह आशा की जा सकती है कि इस समस्या के प्रति जागरूकता के द्वारा निर्धनता के इस पक्ष पर अधिक ध्यान देना संभव हो सकेगा।
- निर्धन व्यक्तियों को सशक्त करने के उपाय उपर्युक्त उपायों के द्वारा निर्धन व्यक्यिों को अधिक सशक्त बनाना चाहिए जिससे वे स्वतंत्र रूप से तथा गरिमा के साथ अपना जीवन-निर्वाह करने में समर्थ हो सकें तथा सरकार अथवा अन्य समूहों की सहायता पर निर्भर नहीं रहें।

'अन्त्योदय' के संप्रत्यय या समाज में 'अंतिम व्यक्ति' का उत्थान, अर्थात अत्यंत निर्धन अथवा अत्यंत सुविधावंचित व्यक्ति, ने निर्धन व्यक्तियों के एक बड़े वर्ग को उनकी पूर्व आर्थिक स्थिति से ऊपर उठाने में सहायता की है। 'अन्त्योदय' के कार्यक्रमों में स्वास्थ्य सुविधाओं, पोषण, शिक्षा तथा रोज़गार के लिए प्रशिक्षण– उन सभी क्षेत्रों जिनमें निर्धन व्यक्तियों को सहायता की आवश्यकता होती है– का प्रावधान किया गया है। ऐसे अनेक कार्यक्रम नगरों की अपेक्षा ग्रामीण क्षेत्रों में अधिक सक्रिय हैं क्योंकि ग्रामीण निर्धन व्यक्तियों में नगरीय निर्धनों की अपेक्षा सुविधाओं का और भी अधिक अभाव है। इसके अतिरिक्त निर्धन व्यक्तियों को अपना छोटे पैमाने का व्यवसाय प्रारंभ करने के लिए भी प्रोत्साहित किया जाता है। इन व्यवसायों के लिए प्रारंभिक पूँजी की व्यवस्था छोटा कर्ज़ या सूक्ष्म ऋण द्वारा की जाती है। यह सुविधा बांग्लादेश के ग्रामीण बैंक की योजना के समान है।

संविधान के 73वें संशोधन के अनुपालन में विकेंद्रित योजनाओं तथा लोक सहभागिता के द्वारा व्यक्तियों को अधिक सशक्त करना है। 'ऐक्शॅन एड्' (ActionAid) जो कि एक अंतर्राष्ट्रीय समूह है, निर्धनों के हित के लिए समर्पित या प्रतिबद्ध है। उसका लक्ष्य निर्धनों को उनके अधिकारों के प्रति अधिक संवेदनशील बनाना, समानता तथा न्याय के प्रति जागरूक करना तथा उनके लिए पर्याप्त पोषण, स्वास्थ्य तथा शिक्षा एवं रोज़गार की सुविधाओं को सुनिश्चित करना है। इस संगठन की भारतीय शाखा हमारे देश में निर्धनता उपशमन के प्रयास में कार्यरत है।

इन उपायों के अल्प समय में कोई जादुई प्रभाव तो अपेक्षित नहीं हैं किंतु यदि निर्धनता उपशमन के लिए ये प्रयास सही भावना एवं सही दिशा में सतत चलते रहें तो हमें इनके सकारात्मक परिणाम बहुत शीघ्र ही देखने को मिल सकते हैं।

आक्रमण, हिंसा तथा शांति

आक्रामकता तथा हिंसा आधुनिक समाज की प्रमुख समस्याओं में से हैं तथा उनके अंतर्गत विभिन्न प्रकार के व्यवहार आते हैं– शिक्षा संस्थाओं में नए विद्यार्थियों की प्रताड़ना (रैगिंग) से लेकर बच्चों से दुर्व्यवहार, घरेलू हिंसा, हत्या तथा बलात्कार, दंगे तथा आतंकवादी हमले।

क्रियाकलाप 8.3

आपने यह लोकोक्ति सुनी होगी कि "नौ नकद न तेरह उधार"।

क्या वे लोग जो निर्धनता का अनुभव कर रहे हैं, उपर्युक्त लोकोक्ति से 'सहमत' या 'असहमत' होंगे? क्यों? कक्षा में अपने अध्यापक के साथ चर्चा कीजिए।

आक्रमण (aggression) पद का उपयोग मनोवैज्ञानिक ऐसे किसी भी व्यवहार को इंगित करने के लिए करते हैं जो किसी व्यक्ति/व्यक्तियों के द्वारा किसी अन्य व्यक्ति/व्यक्तियों को हानि पहुँचाने के आशय से किया जाता

है। इसे वास्तविक क्रियाओं अथवा कटु वचनों या आलोचना द्वारा अथवा यहाँ तक कि दूसरों के प्रति शत्रुतापूर्ण भावनाओं द्वारा भी प्रदर्शित किया जा सकता है। दूसरे व्यक्ति या वस्तु के प्रति बलपूर्वक ध्वंसात्मक या विनाशकारी व्यवहार को **हिंसा** (violence) कहा जाता है। कुछ मनोवैज्ञानिक आक्रमण तथा हिंसा में इस आधार पर भेद करते हैं कि आक्रमण में दूसरे व्यक्ति को हानि या चोट पहुँचाने के आशय से व्यवहार किया जाता है जबकि हिंसा में यह आशय हो भी सकता है और नहीं भी हो सकता है। उदाहरण के लिए, किसी दंगे में बस अथवा दूसरी सार्वजनिक संपत्ति को जलाना हिंसा और आक्रमण दोनों ही कहलाते हैं किंतु, मान लीजिए आप किसी व्यक्ति को अपनी मोटरसाइकिल को उग्रता के साथ ठोकर मारते हुए देखते हैं। इस व्यवहार के पीछे उस व्यक्ति का आशय केवल मोटरसाइकिल को प्रारंभ करना हो सकता है इसलिए यह व्यवहार आक्रमण नहीं कहा जाएगा। इसके विपरीत, व्यक्ति यही उग्र व्यवहार मोटरसाइकिल को क्षतिग्रस्त करने के लिए भी कर सकता है क्योंकि वह उस व्यक्ति (मोटरसाइकिल का मालिक) को नापसंद करता है। इसे आक्रामक व्यवहार कहा जाएगा क्योंकि यहाँ आशय था, क्षति पहुँचाना।

नैमित्तिक आक्रमण (instrumental aggression) तथा **शत्रुतापूर्ण आक्रमण** (hostile aggression) में भी भेद किया जाता है। जब किसी लक्ष्य या वस्तु को प्राप्त करने के लिए आक्रमण किया जाता है तो उसे नैमित्तिक आक्रमण कहते हैं। उदाहरण के लिए एक दबंग छात्र विद्यालय में नए विद्यार्थी को इसलिए चपत लगाता है जिससे कि वह उसकी चॉकलेट ले सके। शत्रुतापूर्ण आक्रमण वह कहलाता है जिसमें लक्ष्य (पीड़ित) के प्रति क्रोध की अभिव्यक्ति होती है और उसे हानि पहुँचाने के आशय से किया जाता है, जबकि हो सकता है कि आक्रामक का आशय पीड़ित व्यक्ति से कुछ भी प्राप्त करना न हो। उदाहरण के लिए, समुदाय के किसी व्यक्ति की एक अपराधी इसलिए पिटाई कर देता है क्योंकि उसने पुलिस के समक्ष अपराधी का नाम लिया।

आक्रमण के कारण

समाज मनोवैज्ञानिकों ने आक्रमण के मुद्दे पर कई वर्षों से अन्वेषण किया है तथा वे आक्रमण के कारणों के संबंध में निम्नलिखित मत व्यक्त करते हैं।

1. *सहज प्रवृत्ति* – आक्रामकता मानव में (जैसा कि यह पशुओं में होता है) सहज (अंतर्जात) होती है। जैविक रूप से यह सहज प्रवृत्ति आत्मरक्षा हेतु हो सकती है।
2. *शरीरक्रियात्मक तंत्र* – शरीरक्रियात्मक तंत्र अप्रत्यक्ष रूप से आक्रामकता जनित कर सकते हैं, विशेष रूप से मस्तिष्क के कुछ ऐसे भागों को सक्रिय करके जिनकी संवेगात्मक अनुभव में भूमिका होती है। शरीरक्रियात्मक भाव प्रबोधन की एक सामान्य स्थिति या सक्रियण की भावना प्रायः आक्रमण के रूप में अभिव्यक्त हो सकती है। भाव प्रबोधन के कई कारण हो सकते हैं। उदाहरण के लिए, जैसे इस अध्याय में पहले वर्णित किया जा चुका है, भीड़ के कारण भी आक्रमण हो सकता है, विशेष रूप से गर्म तथा आर्द्र मौसम में।
3. *बाल-पोषण* – किसी बच्चे का पालन जिस तरह से किया जाता है वह प्रायः उसकी आक्रामकता को प्रभावित करता है। उदाहरण के लिए वे बच्चे जिनके माता-पिता शारीरिक दंड का उपयोग करते हैं, उन बच्चों की अपेक्षा जिनके माता-पिता अन्य अनुशासनिक, तकनीकों का उपयोग करते हैं, अधिक आक्रामक बन जाते हैं। ऐसा संभवतः इसलिए होता है कि माता-पिता ने आक्रामक व्यवहार का एक आदर्श उपस्थित किया है, जिसका बच्चा अनुकरण करता है। यह इसलिए भी हो सकता है कि शारीरिक दंड बच्चे को क्रोधित तथा अप्रसन्न बना देता है और फिर बच्चा जैसे-जैसे बड़ा होता है वह इस क्रोध को आक्रामक व्यवहार के द्वारा अभिव्यक्त करता है।
4. *कुंठा*– आक्रमण कुंठा की अभिव्यक्ति तथा परिणाम हो सकते हैं, अर्थात वह संवेगात्मक स्थिति जो तब उत्पन्न होती है जब व्यक्ति को किसी लक्ष्य तक पहुँचने में बाधित किया जाता है अथवा किसी ऐसी वस्तु जिसे वह पाना चाहता है, उसको प्राप्त करने से उसे रोका जाता है। व्यक्ति किसी लक्ष्य के बहुत निकट होते हुए भी उसे प्राप्त करने से वंचित रह सकता है। यह पाया गया है कि कुंठित स्थितियों में जो व्यक्ति होते हैं, वे आक्रामक व्यवहार उन लोगों की अपेक्षा अधिक प्रदर्शित करते हैं जो कुंठित नहीं होते। कुंठा के प्रभाव की जाँच करने के लिए किए गए एक प्रयोग में बच्चों को कुछ आकर्षक खिलौनों, जिन्हें वे पारदर्शी पर्दे (स्क्रीन) के पीछे से देख सकते थे,

को लेने से रोका गया। इसके परिणामस्वरूप ये बच्चे, उन बच्चों की अपेक्षा, जिन्हें खिलौने उपलब्ध थे, खेल में अधिक विध्वंसक या विनाशकारी पाए गए।

एक अमरीकी मनोवैज्ञानिक जिनका नाम जॉन डोलॉर्ड (John Dollard) था, ने अपने सहयोगियों के साथ मिलकर **कुंठा-आक्रामकता सिद्धांत** (frustration-aggression theory) का परीक्षण करने के लिए विशेष रूप से शोध अध्ययन किया। इस सिद्धांत के अनुसार कुंठा के कारण आक्रामक व्यवहार उत्पन्न होते हैं। जैसा प्रत्याशित था कुंठित व्यक्तियों ने अकुंठित व्यक्तियों की अपेक्षा अधिक आक्रामकता प्रदर्शित की। इसके अतिरिक्त यह आक्रामकता प्रायः दुर्बल व्यक्ति, जो आक्रमण का प्रतिकार करने में असमर्थ थे या जिसके प्रतिकार करने की संभावना नहीं थी, के प्रति अधिक प्रदर्शित की गई। इस गोचर को **विस्थापन** (displacement) कहा जाता है। प्रायः यह देखने में आता है कि समाज में किसी बहुसंख्यक समूह के सदस्य किसी अल्पसंख्यक समूह के सदस्यों के प्रति पूर्वाग्रह रख (अध्याय 6 देखें) सकते हैं तथा अल्पसंख्यक समूह के सदस्यों के प्रति आक्रामक व्यवहार प्रदर्शित कर सकते हैं, जैसे- अपमानजनक भाषा का उपयोग अथवा अल्पसंख्यक समूह के सदस्य पर शारीरिक प्रहार करना। यह विस्थापित आक्रमण कुंठा द्वारा उत्पन्न हो सकता है। बाद में, जैसे-जैसे आक्रमण के कारणों के संबंध में अधिक जानकारियाँ एकत्रित की गईं, यह स्पष्ट हो गया कि कुंठा आक्रमण का एकमात्र कारण या मुख्य कारण भी नहीं है। प्रेक्षणों में पाया गया है कि (क) कुंठित होने के कारण कोई व्यक्ति अनिवार्य रूप से आक्रामक नहीं हो जाता तथा (ख) अनेक स्थितिपरक कारक आक्रामक व्यवहार को प्रेरित कर सकते हैं। इन स्थितिपरक कारकों में से कुछ नीचे वर्णित हैं।

- *अधिगम* – मनुष्यों में आक्रमण प्रमुखतया अधिगम का परिणाम होता है, न कि केवल सहज प्रवृत्ति की अभिव्यक्ति। आक्रामकता का अधिगम एक से अधिक तरीकों द्वारा घटित हो सकता है। कुछ व्यक्ति आक्रामकता इसलिए सीख सकते हैं क्योंकि उन्होंने पाया है कि ऐसा करना एक प्रकार का पुरस्कार है (उदाहरण के लिए शत्रुतापूर्ण आक्रमण के द्वारा आक्रामक व्यक्ति को वह प्राप्त हो जाता है जो वह चाहता है)। यह प्रत्यक्ष प्रबलन द्वारा अधिगम का एक उदाहरण है। व्यक्ति दूसरों के आक्रामक व्यवहार का प्रेक्षण करते हुए भी आक्रमण करना सीखता है। यह **मॉडलिंग** या **प्रतिरूपण** (modelling) के द्वारा अधिगम का एक उदाहरण है।
- *आक्रामक मॉडल का प्रेक्षण* – एलबर्ट बंदूरा (Albert Bandura) एवं उनके सहयोगियों तथा अन्य मनोवैज्ञानिकों द्वारा किए गए अनेक शोध अध्ययन आक्रामकता के अधिगम में मॉडल की भूमिका को प्रदर्शित करते हैं। यदि कोई बच्चा टेलीविज़न पर आक्रमण तथा हिंसा देखता है तो वह उस व्यवहार का अनुकरण करना प्रारंभ कर सकता है। इस बात में तनिक भी संदेह नहीं है कि टेलीविज़न तथा सिनेमा के माध्यम से दिखाई जाने वाली हिंसा एवं आक्रामकता का दर्शकों, विशेष रूप से बच्चों पर, प्रबल प्रभाव पड़ता है। किंतु प्रश्न यह है कि क्या केवल टेलीविज़न पर हिंसा देखने मात्र से व्यक्ति आक्रामक बन जाता है? या कुछ अन्य स्थितिपरक कारक हैं जो उसके आक्रामक व्यवहार को प्रकट करने में सहायक होते हैं? इस प्रश्न का उत्तर विशिष्ट स्थितिपरक कारकों के संबंध में प्राप्त करके दिया जा सकता है।
- *दूसरों द्वारा क्रोध-उत्तेजक क्रियाएँ* – यदि कोई व्यक्ति एक हिंसा प्रदर्शित करने वाला सिनेमा देखता है तथा इसके पश्चात उसे किसी अन्य व्यक्ति द्वारा क्रोध दिलाया जाता है (उदाहरण के लिए उसका अपमान कर या उसे धमकी देकर, शारीरिक आक्रमण द्वारा या बेईमानी द्वारा) तो उस व्यक्ति में आक्रामक व्यवहार प्रदर्शित करने की संभावना बढ़ जाती है, इसकी तुलना में कि यदि उसे क्रोधित नहीं किया गया हो। जिन अध्ययनों के द्वारा कुंठा-आक्रामकता सिद्धांत का परीक्षण किया गया था उनमें व्यक्ति को उत्तेजित कर क्रोध दिलाना कुंठा उत्पन्न करने का एक तरीका था।
- *आक्रमण के शस्त्रों (हथियारों) की उपलब्धता* – कुछ शोधकर्ताओं ने पाया है कि हिंसा को देखने के पश्चात प्रेक्षक में आक्रामकता की अधिक संभावना उसी दशा में होती है जब वह आक्रमण के शस्त्र, जैसे - डंडा, पिस्तौल या चाकू आसानी से उपलब्ध हों।
- *व्यक्तित्व-कारक* – व्यक्तियों से अंतःक्रिया करते समय हम देखते हैं कि उनमें से कुछ स्वाभाविक रूप से ही अधिक 'क्रोधी (गर्म-मिजाज)' होते हैं तथा अन्य लोगों की अपेक्षा अधिक आक्रामकता प्रदर्शित करते हैं। अतः हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि

आक्रामकता एक वैयक्तिक गुण है। यह पाया गया है कि वे व्यक्ति जिनमें निम्नस्तरीय आत्म-सम्मान होता है तथा जो असुरक्षित महसूस करते हैं, वे अपने अहं को प्रबल दिखाने के लिए आक्रामक व्यवहार कर सकते हैं। इसी प्रकार वे व्यक्ति जिनमें अत्यंत उच्चस्तरीय आत्म-सम्मान होता है वे भी आक्रामकता इसलिए प्रदर्शित कर सकते हैं क्योंकि उन्हें लगता है कि दूसरे लोग उन्हें उस उच्च 'स्तर' पर नहीं रखते जिस पर उन्होंने स्वयं को रखा हुआ है।

- *सांस्कृतिक कारक* – जिस संस्कृति में व्यक्ति पल कर बड़ा होता है वह अपने सदस्यों को आक्रामक व्यवहार सिखा सकती है अथवा नहीं। ऐसा वह आक्रामक व्यवहारों की प्रशंसा द्वारा तथा उन्हें प्रोत्साहन कर सकती है अथवा ऐसे व्यवहारों को हतोत्साहित करके उनकी आलोचना कर सकती है। कुछ जनजातीय समुदाय रूप से शांतिप्रिय हैं जबकि कुछ अन्य आक्रामकता को अपनी उत्तरजीविता के लिए आवश्यक समझते हैं।

आक्रामकता तथा हिंसा को कम करना–कुछ उक्तियाँ

यह जानते हुए कि आक्रमकता के एक से अधिक कारण हो सकते हैं, क्या समाज में आक्रामकता तथा हिंसा को कम करने के लिए कुछ किया जा सकता है? आक्रमकता तथा हिंसा को कम करने के लिए कुछ उपायों का वर्णन आगे किया गया है। किसी समाज अथवा पर्यावरण को ऐसा बनाना जिसमें कुंठित स्थिति न हो, यह कोई सरल कार्य नहीं है। तथापि, आक्रामकता के अधिगम को बढ़ती हुई आक्रामकता की सामान्य समस्या के प्रति उपयुक्त अभिवृत्ति विकसित कर कम किया जा सकता है।

- माता-पिता तथा शिक्षकों को विशेष रूप से सतर्क रहने की आवश्यकता है कि वे आक्रामकता को किसी भी रूप में प्रोत्साहित या पुरस्कृत न करें। अनुशासित करने के लिए दंड के उपयोग को भी परिवर्तित करना होगा।
- आक्रामक मॉडलों के व्यवहारों का प्रेक्षण करने तथा उनका अनुकरण करने के लिए अवसरों को कम करने की आवश्यकता है। आक्रमण को वीरोचित व्यवहार के रूप में प्रस्तुत करने को विशेष रूप से परिहार करने की आवश्यकता है क्योंकि इससे प्रेक्षण द्वारा अधिगम करने के लिए उपयुक्त परिस्थिति का निर्माण होता है।
- निर्धनता तथा सामाजिक अन्याय आक्रमण के प्रमुख कारण हो सकते हैं क्योंकि वे समाज के कुछ वर्गों में कुंठा उत्पन्न कर सकते हैं। सामाजिक न्याय तथा समानता को समाज में परिपालन करने से कुंठा के स्तर को कम करने तथा उसके द्वारा आक्रामक प्रवृत्तियों को निर्यंत्रित करने में कम से कम कुछ सीमा तक सफलता मिल सकती है।

बॉक्स 8.2

महात्मा गांधी तथा अहिंसा–अहिंसा क्यों कारगर होती है?

"अहिंसा उच्च कोटि की एक सक्रिय शक्ति है। वह आत्मा की शक्ति है या हमारे भीतर ईश्वरीय शक्ति है। अपूर्ण मनुष्य इस संपूर्ण सार को ग्रहण नहीं कर सकते - वह इसकी पूर्ण ज्वाला को सहन नहीं कर सकते किंतु इसका सूक्ष्मतम अंश भी जब हमारे भीतर सक्रिय होता है तो वह अद्‌भुत कार्य कर सकता है।

मैं कोई अंतर्दृष्टा नहीं हूँ; मैं केवल एक व्यावहारिक आदर्शवादी हूँ। अहिंसा का धर्म ऋषियों या सिद्ध पुरुषों के लिए ही नहीं है। वह सामान्य जन के लिए भी है। अहिंसा मानव जाति के लिए वैसा ही नियम है जैसे कि हिंसा पशुओं के लिए नियम है। मानव की गरिमा के लिए एक उन्नत नियम– आत्मा के बल का पालन आवश्यक है। अहिंसा के लिए किसी बाह्य प्रशिक्षण की आवश्यकता नहीं है। इसके लिए केवल आवश्यकता है, प्रतिकार के लिए भी किसी की जान न लेने की इच्छाशक्ति की तथा बदला लिए बिना मृत्यु का मुकाबला करने की हिम्मत की। यह अहिंसा पर कोई प्रवचन (उपदेश) नहीं है बल्कि केवल भावशून्य तर्क है तथा एक सार्वभौमिक नियम की उक्ति है। कानून में अटूट विश्वास के कारण कोई भी उत्तेजना सहिष्णुता के अभ्यास के लिए अधिक महत्वपूर्ण सिद्ध नहीं होनी चाहिए।

सत्य के अहिंसा के मिल जाने से आप संसार को अपने कदमों में झुका सकते हैं। अपने सार में सत्याग्रह कुछ और नहीं बल्कि राजनीतिक, अर्थात राष्ट्रीय जीवन में सत्य तथा कोमलता का आगमन है---। अपने स्वरूप के ही कारण अहिंसा शक्ति का अभिग्रहण नहीं कर सकती है और न ही वह उसका लक्ष्य हो सकता है। तथापि, अहिंसा उससे अधिक कर सकती है; वह शासन-व्यवस्था को बलपूर्वक अधिग्रहीत किए बिना भी कुशलतापूर्वक शक्ति को नियंत्रित तथा निर्देशित कर सकती है। यही उसका सौन्दर्य है।"

- इन उक्तियों के अतिरिक्त सामाजिक या सामुदायिक स्तर पर यह आवश्यक है कि शांति के प्रति सकारात्मक अभिवृत्ति का विकास किया जाए। हमें न केवल आक्रामकता को कम करने की आवश्यकता है बल्कि इसकी भी आवश्यकता है कि हम सक्रिय रूप से शांति विकसित करें एवं उसे बनाए रखें। हमारे अपने सांस्कृतिक मूल्य सदा शांतिपूर्ण तथा सामंजस्यपूर्ण सह-अस्तित्व को अधिक महत्त्व देते हैं। हमारे राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने विश्व को शांति का एक नया दृष्टिकोण जो कि केवल आक्रमण का अभाव नहीं था, यह **अहिंसा** (non-violence) का विचार था, जिस पर उन्होंने स्वयं जीवन भर अभ्यास किया (बॉक्स 8.2 देखें)।

स्वास्थ्य

आधुनिक समय में स्वास्थ्य तथा कुशल-क्षेम (कल्याण) के विषय में हमारी समझ में बहुत परिवर्तन आया है। अब यह स्वीकार किया जाने लगा है कि अनेक स्वास्थ्य संबंधी परिणाम केवल रोग के प्रकार्य ही नहीं है बल्कि हमारे सोचने तथा व्यवहार करने के ढंग के भी परिणाम हैं। यह विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) द्वारा दी गई 'स्वास्थ्य' की परिभाषा में भी परिलक्षित होता है जिसके अंतर्गत स्वास्थ्य के जैविक, मनोवैज्ञानिक तथा सामाजिक पक्ष अंतर्निहित हैं। यह परिभाषा न केवल स्वास्थ्य के शारीरिक बल्कि मानसिक तथा आध्यात्मिक पक्षों पर भी प्रकाश डालती है। इस खंड में हम केवल शारीरिक स्वास्थ्य पर ही ध्यान देंगे क्योंकि पिछले अध्यायों में आप मानसिक स्वास्थ्य के संबंध में पहले ही पढ़ चुके हैं।

स्वास्थ्य तथा रोग दोनों में मात्रात्मक संबंध है। कोई व्यक्ति किसी शारीरिक रूप से अशक्तकारी रोग से ग्रस्त हो सकता है किंतु दूसरी दृष्टि से काफ़ी स्वस्थ हो सकता है। आप बाबा आमटे तथा स्टीफेन हॉकिंस के नाम का पुनः स्मरण कीजिए, ये दोनों ही अपंगकारी रोगों से ग्रस्त हैं किंतु उन्होंने अपने क्षेत्रों में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। हम यह भी देखते हैं कि विभिन्न संस्कृतियों में लोगों की सोच इस संबंध में भिन्न होती है कि लोग बीमार कब तथा क्यों हो जाते हैं और इस प्रकार उनके मॉडल भी अलग-अलग होते हैं जो वे रोगों की रोकथाम (निवारण) तथा स्वास्थ्य संवर्धन के लिए उपयोग में लाते हैं। अनेक परंपरागत संस्कृतियाँ, जैसे- चीनी, भारतीय तथा लेटिन अमरीकी हैं जो विश्वास करती हैं कि विभिन्न शारीरिक तत्वों के सामंजस्यपूर्ण संतुलन के परिणामस्वरूप ही अच्छा स्वास्थ्य होता है तथा इस संतुलन के लोप या अभाव से ही रोग उत्पन्न होता है। इसके विपरीत, पाश्चात्य संस्कृतियों में स्वास्थ्य को पूर्णरूप से कार्य करने वाले यंत्र (मशीन) के परिणामस्वरूप समझा जाता है जिसमें किसी भी प्रकार का अवरोध न हो। विभिन्न संस्कृतियों में जो भिन्न आयुर्विज्ञान पद्धति विकसित हुई हैं वे इन्हीं मॉडलों पर आधारित हैं। आप एक अन्य तथ्य जानना चाह सकते हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा प्रस्तुत विश्व स्वास्थ्य रिपोर्ट में पाया गया है कि विकासशील देशों, जैसे- एशिया, अफ्रीका तथा लेटिन अमरीका में अधिक लोग संक्रामक या संचारी रोगों, जैसे- एच.आई.वी./एड्स, तपेदिक, मलेरिया, श्वसन-संक्रमण तथा पोषण-हीनता के कारण मरते हैं। विकसित देशों में प्रमुख कारण विभिन्न हृद्वाहिका रोग, कैंसर तथा मनोरोग-विकार हैं। ये अंतर इन संस्कृतियों की आर्थिक और सामाजिक संरचनाओं तथा उनकी मनोवैज्ञानिक विशेषताओं के आधार पर समझाए जा सकते हैं।

वैयक्तिक स्तर पर मनोवैज्ञानिक अनेक प्रकार के कारकों को इंगित करते हैं, जैसे- स्वास्थ्य संबंधी संज्ञान जिनमें अभिवृत्तियाँ तथा विश्वास भी अंतर्निहित हैं, व्यवहार तथा सामाजिक कारक जो शारीरिक कुशल-क्षेम या रोग से संबद्ध होते हैं।

(क) **संज्ञान** – आपने देखा होगा कि कैसे कुछ व्यक्ति यदि इस प्रकार के लक्षणों से ग्रस्त हों, जैसे – मिचली, जुकाम, अतिसार, चेचक इत्यादि, तो वे दूसरों की अपेक्षा चिकित्सक से जल्दी सहायता माँगते हैं। सहायता माँगने में ये विभिन्नताएँ रोग, उसकी तीव्रता तथा रोग के कारणों से संबंधित मानसिक प्रतिनिधानों में लोगों द्वारा किए गए अंतरों के कारण होती हैं। संभव है कि कोई व्यक्ति जुकाम के लिए चिकित्सक से कोई सहायता न माँगे, यदि वह यह कारण आरोपित करता हो कि दही खाने से जुकाम हो गया या कुष्ठ रोग अथवा चेचक को भी यदि वह ईश्वर का प्रकोप समझता हो तो वह चिकित्सक से सहायता नहीं माँग सकता है।

रोग के संबंध में जागरूकता या जानकारी का स्तर; यह विश्वास कि वह क्यों उत्पन्न होता है; तथा इस व्यथा से छुटकारा पाने या स्वास्थ्य संवर्धन के संभावित उपाय सहायता प्राप्त करने के व्यवहारों और साथ ही चिकित्सक

के द्वारा बताए गए पथ्यापथ्य-नियमों के पालन को प्रभावित करता है। एक अन्य कारक जो चिकित्सक से हमारी सहायता प्राप्त करने के व्यवहार को प्रभावित करता है, वह है पीड़ा की अनुभूति जो व्यक्तित्व, दुश्चिंता तथा सामाजिक मानकों का प्रकार्य होती है।

(ख) **व्यवहार** – मनोवैज्ञानिकों ने प्रबल साक्ष्य प्राप्त किए हैं जो यह प्रदर्शित करते हैं कि हमारे व्यवहार तथा जीवन शैली हमारे स्वास्थ्य को अत्यधिक प्रभावित करते हैं। लोग ऐसे व्यवहारपरक जोखिम उठाने, जैसे- धूम्रपान या तंबाकू का उपयोग, मद्य तथा मादक द्रव्य का दुरुपयोग, असुरक्षित काम-व्यवहार, आहार तथा शारीरिक व्यायाम इत्यादि में अत्यधिक भिन्नताएँ प्रदर्शित करते हैं। अब यह स्वीकार किया जा चुका है कि ऐसे व्यवहार कॉरोनरि हृदय रोग (coronary heart disease, CHD), कैंसर और एच.आई.वी./एड्स से तथा अनेक अन्य रोगों से संबद्ध होते हैं। एक नई विद्याशाखा, जिसे **व्यवहार आयुर्विज्ञान** (Behaviour Medicine) कहते हैं प्रकट हुई है, जो रोग से जनित दबाव को उपशमित करने हेतु व्यवहार में परिष्करण या परिवर्तन पर बल देती है।

(ग) **सामाजिक एवं सांस्कृतिक कारक**- अब ऐसे शोध कार्यों की संख्या में निरंतर वृद्धि हो रही है जो यह प्रदर्शित करते हैं कि सामाजिक तथा सांस्कृतिक विभेद हमारी शरीरक्रियात्मक अनुक्रियाओं को प्रभावित कर सकते हैं तथा वे सभी संस्कृतियों में एक समान नहीं होते। उदाहरण के लिए, अमर्ष तथा क्रोध एवं सी.एच.डी. में संबंध सभी संस्कृतियों में एक समान नहीं हैं (उदाहरण के लिए, भारत तथा चीन में)। यद्यपि संस्कृति तथा शरीरक्रियात्मक अनुक्रियाओं में अंत:क्रिया पर और अधिक साक्ष्यों की आवश्यकता है, किंतु सामाजिक तथा सांस्कृतिक मानक जो भूमिकाओं और लिंगों से जुड़े हैं, वे हमारे स्वास्थ्य व्यवहारों को बहुत अधिक प्रभावित करते हैं। भारतीय समाज में महिलाओं के लिए चिकित्सा सलाह कई कारणों से देर में उपलब्ध हो पाती है – उन्हें कम मूल्यवान समझा जाता है, या इस विश्वास के कारण कि वे अधिक हृष्टपुष्ट या दृढ़ होती हैं या रोग के साथ शर्म के संबद्ध होने के कारण।

व्यवहार पर टेलीविज़न का समाघात

इसमें कोई संदेह नहीं कि टेलीविज़न प्रौद्योगिकीय प्रगति का एक उपयोगी उत्पाद है। किंतु उसके मानव पर मनोवैज्ञानिक समाघात के संबंध में दोनों सकारात्मक एवं नकारात्मक प्रभाव पाए गए हैं। अनेक शोध अध्ययनों में टेलीविज़न देखने की संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं तथा सामाजिक व्यवहारों पर प्रभाव का अध्ययन किया गया है, विशेष रूप से पाश्चात्य संस्कृतियों में। उनके निष्कर्ष मिश्रित (मिले-जुले) प्रभाव दिखाते हैं। अधिकांश अध्ययन बच्चों पर किए गए हैं क्योंकि ऐसा समझा जाता है कि वे वयस्कों की अपेक्षा टेलीविज़न के समाघात के प्रति अधिक संवेदनशील या असुरक्षित हैं।

पहला, टेलीविजन बड़ी मात्रा में सूचनाएँ और मनोरंजन को आकर्षक रूप में प्रस्तुत करता है तथा यह दृश्य माध्यम है, अत: यह अनुदेश देने का एक प्रभावी माध्यम बन गया। इसके साथ ही क्योंकि कार्यक्रम आकर्षक होते हैं, इसलिए बच्चे उन्हें देखने में बहुत अधिक समय व्यतीत करते हैं। इसके कारण उनके पठन-लेखन (पढ़ने-लिखने) की आदत तथा घर के बाहर की गतिविधियों, जैसे- खेलने में कमी आती है।

दूसरा, टेलीविज़न देखने से बच्चों की एक लक्ष्य पर ध्यान केंद्रित करने की योग्यता, उनकी सर्जनात्मकता तथा समझने की क्षमता तथा उनकी सामाजिक अंत:क्रियाएँ भी प्रभावित हो सकती हैं। एक ओर, कुछ श्रेष्ठ कार्यक्रम सकारात्मक अंतर्वैयक्तिक अभिवृत्तियों पर बल देते हैं तथा उपयोगी तथ्यात्मक सूचनाएँ उपलब्ध कराते हैं जो बच्चों को कुछ वस्तुओं को अभिकल्पित तथा निर्मित करने में सहायता करते हैं। दूसरी ओर, ये कार्यक्रम कम उम्र के दर्शकों का विकर्षण या चित्त-अस्थिर कर एक लक्ष्य पर ध्यान केंद्रित करने की उनकी योग्यता में व्यवधान उत्पन्न कर सकते हैं।

तीसरा, लगभग चालीस वर्ष पूर्व अमरीका तथा कनाडा में एक गंभीर वाद-विवाद इस विषय पर उठा कि टेलीविज़न देखने का दर्शकों, विशेषकर बच्चों, की आक्रामकता तथा हिंसात्मक प्रवृत्ति पर क्या प्रभाव पड़ता है। जैसा कि पहले आक्रामक व्यवहारों के संदर्भ में बताया जा चुका है, शोध के परिणामों ने यह प्रदर्शित किया कि टेलीविज़न पर हिंसा को देखना वस्तुत: दर्शकों में अधिक आक्रामकता से संबद्ध था। यदि दर्शक बच्चे थे तो जो कुछ वे देखते थे उसका अनुकरण करने की उनमें प्रवृत्ति थी किंतु उनमें ऐसे व्यवहारों के परिणामों को समझने की परिपक्वता नहीं थी। तथापि,

कुछ अन्य शोध अध्ययनों में यह रेखांकित किया गया कि केवल टेलीविज़न पर हिंसा देखने मात्र से बच्चे अधिक आक्रामक नहीं हो जाते हैं। स्थिति में अन्य कारकों की उपस्थिति भी आवश्यक है। कुछ अन्य शोध-निष्कर्ष यह भी प्रदर्शित करते हैं कि हिंसा को देखने से दर्शकों में वस्तुतः सहज आक्रामक प्रवृत्तियों में कमी आ सकती है- जो कुछ भीतर रुका हुआ है उसे निकास या निर्गम का मार्ग मिल जाता है, इस प्रकार तंत्र साफ हो जाता है, जैसेकि एक बंद निकास-नल की सफाई की जा रही हो। यह प्रक्रिया **कैथार्सिस** (catharsis) कहलाती है।

चौथा, वयस्कों तथा बच्चों के संबंध में यह कहा जाता है कि एक उपभोक्तावादी अभिवृत्ति (प्रवृत्ति) विकसित हो रही है और यह टेलीविज़न देखने के कारण है। बहुत से उत्पादों के विज्ञापन प्रसारित किए जाते हैं तथा किसी दर्शक के लिए उनके प्रभाव में आ जाना काफ़ी स्वाभाविक प्रक्रिया है।

इन परिणामों की चाहे कैसे भी व्याख्या की जाए, इस बात के लिए पर्याप्त प्रमाण हैं जो असीमित टेलीविज़न देखने के प्रति चेतावनी देते हैं।

क्रियाकलाप 8.4

उन सभी सूचनाओं की एक सूची बनाइए जो आपने पिछले एक सप्ताह में टेलीविज़न देखते हुए प्राप्त की तथा निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए-

आपने कौन-से कार्यक्रम देखे?

कौन-सी सूचनाएँ सकारात्मक व्यवहारों को इंगित करती हैं तथा कौन-सी सूचनाएँ नकारात्मक व्यवहारों को इंगित करती हैं?

प्रमुख पद

आक्रमण, वायु प्रदूषण, संक्रामक या संचारी रोग, प्रतिस्पर्धा सहिष्णुता, भीड़ सहिष्णुता, भीड़, विपदा, विस्थापन, पारिस्थितिकी, पर्यावरण, पर्यावरणी मनोविज्ञान, नैमित्तिक परिप्रेक्ष्य, मॉडलिंग या प्रतिरूपण, शोर, शांति, व्यक्तिगत स्थान, भौतिक पर्यावरण, अभिघातज उत्तर दबाव विकार, निर्धनता उपशमन, निर्धनता, पर्यावरण-उन्मुख व्यवहार, आत्म-सक्षमता, सामाजिक पर्यावरण, आध्यात्मिक परिप्रेक्ष्य, संव्यहार उपागम।

सारांश

- *हम बढ़ती जनसंख्या, त्वरित औद्योगीकरण तथा मानव उपभोग की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु अपने भौतिक पर्यावरण से पुनरुज्जीवित होने वाले तथा पुनरुज्जीवित न होने वाले संसाधनों का उपयोग कर लेते हैं। अवांछनीय मानव क्रियाओं ने पर्यावरण की दशाओं को परिवर्तित कर दिया है जिनके कारण प्रदूषण, शोर, भीड़ की समस्याएँ खड़ी हो गई हैं तथा प्राकृतिक विपदाओं का प्रकटीकरण प्रबल हो गया है।*
- *पर्यावरणी संकट तथा उनके समाधानों को संव्यवहार तथा पारंपरिक भारतीय उपागमों द्वारा समझा जा सकता है।*
- *प्रदूषण हमारे मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य तथा मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है।*
- *शोर भी हमारे चिंतन, स्मृति तथा अधिगम पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। तीव्र उच्च ध्वनि स्तर हमारी सुनने की क्षमता को स्थायी क्षति पहुँचा सकता है तथा हृदयगति, रक्तचाप और पेशी-तनाव बढ़ा सकता है।*
- *भीड़ पर्याप्त स्थान न होने की मनोवैज्ञानिक अनुभूति है। भीड़ संज्ञानात्मक निष्पादन, अंतर्वैयक्तिक संबंधों तथा शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य पर निषेधात्मक प्रभाव डालती है।*
- *प्राकृतिक विपदा किसी समाज के सामान्य जनजीवन में व्यवधान डालती है तथा क्षति, विनाश और मानव पीड़ा का कारण बन जाती है। विपदा के पश्चात अभिघातज उत्तर दबाव विकार अत्यंत सामान्य लक्षण है। विपदा प्रभावित व्यक्तियों को परामर्श देकर तथा सामूहिक कार्यों को करने के अवसर बढ़ाकर इस दबाव को कम किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त, व्यक्तियों तथा समुदायों में ऐसी संभावित विपदाओं के प्रति शीघ्र एवं प्रभावी प्रतिक्रिया करने हेतु पूर्व तैयारी विपदा के प्रतिकूल प्रभाव को कम कर सकती है।*
- *पर्यावरण-उन्मुख व्यवहारों के अंतर्गत वे व्यवहार जिनका उद्देश्य पर्यावरण का समस्याओं से संरक्षण है तथा जो स्वस्थ पर्यावरण को उन्नत करते हैं, दोनों ही निहित हैं।*
- *समाज के एक बड़े वर्ग को प्रभावित करने वाली समस्याओं के कारण सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक सरोकार उत्पन्न होते हैं।*

- *निम्न आर्थिक स्थिति (स्तर) निर्धनता का कारण है। इसका संबंध वंचन तथा असुविधा से है। इसके कारण संज्ञानात्मक निष्पादन, व्यक्तित्व तथा सामाजिक व्यवहार पर निषेधात्मक प्रभाव पड़ता है। निर्धन व्यक्तियों के आर्थिक तथा सामाजिक सशक्तीकरण हेतु अनेक कार्यक्रम लागू किए जा रहे हैं।*
- *आक्रमण तथा हिंसा आधुनिक समाज की प्रमुख समस्याओं में से हैं। आक्रामकता के अधिगम को बढ़ती हुई आक्रामकता की सामान्य समस्या के प्रति उपयुक्त अभिवृत्ति के विकास द्वारा कम किया जा सकता है।*
- *स्वास्थ्य, पूर्ण शारीरिक, मानसिक तथा सामाजिक कुशल-क्षेम या कल्याण की स्थिति है। राष्ट्र के समक्ष संक्रामक रोगों, जैसे - अतिसार, तपेदिक तथा एच.आई.वी./एड्स तथा असंक्रामक रोगों, जैसे - अल्परक्तता, कैंसर, मधुमेह तथा दबाव-संबद्ध विकारों में कमी लाने की चुनौती है। सकारात्मक जीवन शैली वाली आदतों के द्वारा सकारात्मक संवेगों तथा शारीरिक स्वस्थता को उन्नत किया जा सकता है तथा स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं में कमी लाई जा सकती है।*
- *टेलीविज़न देखने के फलस्वरूप मानव व्यवहार पर सकारात्मक तथा नकारात्मक दोनों प्रभाव प्रेक्षित किए गए हैं। अधिकांश शोध अध्ययन बच्चों पर किए गए हैं क्योंकि उनको वयस्कों की अपेक्षा टेलीविज़न के समाघात के प्रति अधिक संवेदनशील या असुरक्षित प्रत्यक्षित किया जाता है।*

समीक्षात्मक प्रश्न

1. आप 'पर्यावरण' पद से क्या समझते हैं? मानव-पर्यावरण संबंध को समझने के लिए विभिन्न परिप्रेक्ष्यों की व्याख्या कीजिए।
2. "मानव पर्यावरण को प्रभावित करते हैं तथा उससे प्रभावित होते हैं"। इस कथन की व्याख्या उदाहरणों की सहायता से कीजिए।
3. शोर क्या है? मानव व्यवहार पर शोर के प्रभाव का विवेचन कीजिए।
4. भीड़ के प्रमुख लक्षण क्या हैं? भीड़ के प्रमुख मनोवैज्ञानिक परिणामों की व्याख्या कीजिए।
5. मानव के लिए 'व्यक्तिगत स्थान' का संप्रत्यय क्यों महत्वपूर्ण है? अपने उत्तर को एक उदाहरण की सहायता से उचित सिद्ध कीजिए।
6. 'विपदा' पद से आप क्या समझते हैं? अभिघातज उत्तर दबाव विकार के लक्षणों को सूचीबद्ध कीजिए। उसका उपचार कैसे किया जा सकता है?
7. पर्यावरण-उन्मुख व्यवहार क्या है? प्रदूषण से पर्यावरण का संरक्षण कैसे किया जा सकता है? कुछ सुझाव दीजिए।
8. 'निर्धनता' 'भेदभाव' से कैसे संबंधित है? निर्धनता तथा वंचन के मुख्य मनोवैज्ञानिक प्रभावों की व्याख्या कीजिए।
9. 'नैमित्तिक आक्रमण' तथा 'शत्रुतापूर्ण आक्रमण' में अंतर कीजिए। आक्रामकता तथा हिंसा को कम करने हेतु कुछ युक्तियों का सुझाव दीजिए।
10. मानव व्यवहार पर टेलीविज़न देखने के मनोवैज्ञानिक समाघात का विवेचन कीजिए। उसके प्रतिकूल परिणामों को कैसे कम किया जा सकता है? व्याख्या कीजिए।

परियोजना विचार

1. अपने इलाके में 10 घरों का सर्वेक्षण कीजिए। एक साक्षात्कार अनुसूची का निर्माण कीजिए तथा प्रत्येक घर के मुखिया से मिलिए तथा पूछिए- आप किन प्रदूषणों का अनुभव करते हैं? प्रत्येक प्रदूषण के आपके परिवार के सदस्यों के स्वास्थ्य पर क्या प्रभाव पड़ते हैं? प्रदत्त को संक्षिप्त कीजिए तथा स्वास्थ्य संबंधी प्रभावों को शारीरिक तथा मानसिक लक्षणों या रोगों में विभक्त कीजिए। एक रिपोर्ट तैयार कीजिए तथा प्रदूषण को नियंत्रित करने हेतु सुझाव दीजिए।
2. अपने इलाके के 20 वयोवृद्ध व्यक्तियों का सर्वेक्षण उनकी सामाजिक समस्याओं तथा इनके प्रति उनके उपायों को जानने हेतु कीजिए। सामाजिक समस्याओं की एक सूची बनाइए तथा उन्हें कार्ड (4" 4") पर लिखिए। प्रत्येक वयोवृद्ध से उन्हें प्राथमिकता क्रम में व्यवस्थित करने को कहिए, जिसमें वे सर्वाधिक महत्वपूर्ण सामाजिक समस्या सबसे पहले तथा सबसे कम महत्वपूर्ण सामाजिक समस्या को सबसे अंत में रखें। अपनी अनुसूची में प्रत्येक समस्या का कोटि क्रम डालिए तथा कार्ड में व्यवस्थित प्रत्येक समस्या के कारणों तथा उनके समाधान के उपायों के बारे में उनसे पूछिए। एक रिपोर्ट तैयार कीजिए तथा अपने अध्यापक के साथ इस पर परिचर्चा कीजिए।

वेबलिंक्स

http://library.thinkquest.org/25009/causes/causes.cycle.html
http://www.news.cornell.edu/Chronicle/99/2.18.99/crowding.html
http://www.helpguide.org/mental/psychological_trauma.htm
http://joannecantor.com/montrealpap_fin.htm

शैक्षिक संकेत

1. वास्तविक जीवन के उदाहरण देकर शोर, प्रदूषण, भीड़ तथा प्राकृतिक विपदाओं के मानव व्यवहार पर मनोवैज्ञानिक प्रभावों के विषय में विद्यार्थियों के मत ज्ञात किए जा सकते हैं।
2. पर्यावरण-उन्मुख व्यवहार के उन्नयन के विषय में विवेचन करते समय विद्यार्थियों को, सरकार तथा पर्यावरण के क्षेत्र में कार्य कर रहे गैर-सरकारी संगठनों द्वारा ली गई विभिन्न पहल-शक्तियों के संबंध में विचार करने के लिए प्रोत्साहित किया जा सकता है।
3. इस अध्याय की विषयवस्तु का संचालन करते समय अध्यापक कथानक पर प्रश्न पूछने, कहानियों, उपाख्यानों, खेलों, प्रयोगों, परिचर्चा, कथोपकथन, उदाहरणों, सादृश्य, भूमिका निर्वाह इत्यादि उक्तियों का उपयोग शांति-संबंधित मूल्यों को बढ़ावा देने के लिए कर सकते हैं।
4. मनोविज्ञान तथा सामाजिक सरोकार के विषय पर जानकारी देते समय अध्यापक केवल सूचनाएँ देने के स्थान पर वादविवाद तथा परिचर्चा का उपयोग कर सकते हैं। अधिगम के प्रति यह उपागम विद्यार्थियों को सामाजिक वास्तविकताओं के प्रति जीवंत बनाएगा।